भोजपुरी जिंदगी

अगस्त 2014

प्रधान संपादक	डॉ. गोरख प्रसाद 'मस्ताना'
संपादक	संतोष कुमार
प्रबन्ध संपादक	मनोज कुमार सिन्हा
	मनोज कुमार सिंह
ग्राफिक्स एवं पेज सज्जा	मुनेश्वर प्रसाद

संपादकीय कार्यालय :-
आर जैड एच/940, जानकी द्वारिका निवास, प्रथम तल, राजनगर-2, पालम कॉलोनी, नई दिल्ली-110077
फोन - 09868152874, ई.मेल - bhojpurijinigi@gmail.com

सहयोग राशि : 20 रुपये (प्रति अंक)

इहां खोजीं

1. भोजपुरी दलित विमर्श के उद्घोषक कवि हीरा डोम 4
2. 'अछूत के शिकायत' एगो प्रासंगिकता 7
3. स्वीकारोक्ति 9
4. भोजपुरी कविता में दलित-विमर्श 11
5. दलित काव्य परम्परा के सौ साल आउर 'हीरा डोम' 15
6. हीरा डोम : दलित साहित्य में मील के पत्थर 17
7. दलित साहित्य का सौन्दर्य-बोध और भिखारी ठाकुर 19
8. कब होगी दूर 'अछूत की शिकायत' 22
9. अछूत के शिकायत एक युगान्तकारी रचना 25
10. हीरा डोम के काव्य-चेतना 29
11. 'अछूत की शिकायत' के बहाने 31
12. भोजपुरी दलित साहित्य के दीपक हीरा डोम 34
13. हीरा डोमः महावीर प्रसाद द्विवेदी का एक षड़यंत्र 35
14. दलित साहित्य परंपरा और हीरा डोम 40
15. सशक्त विचार के बुनियादी महल 43

भोजपुरी कई मायने में हिंदी से अलग है : राजेन्द्र प्र. सिंह पेज 27

दलित भोजपुरी काव्य के सौ साल पर विचार गोष्ठी पेज 44

मधुकर सिंह एक अपराजेय योद्धा

पेज 42

प्रत्येक रचना के लिए लेखक के विचार उसके निजी विचार हैं। लेखक और सम्पादक के विचारों में साम्य होना आवश्यक नहीं है। अतः प्रत्येक रचना के विवाद के लिए लेखक स्वयं ही उत्तरदायी होगा। कथा एवं लेख में प्रकाशित चित्र अविवादित एवं प्रतीकात्मक हैं। इनका उपयोग केवल कलात्मकता बढ़ाने के लिए किया गया है। किसी भी विवाद का निपटारा दिल्ली न्यायालय में ही होगा।

संपादक के कलम से ....

संतोष कुमार

'समाज में दबावल, सतावल, गिरावल, उपेक्षित, शोषित, पीडित, दमित, अपमानित आ बहिष्कृत जाति जवन आजू खाली हिन्दू ना, मुसलमान आ क्रिस्तान सभ धरम में बाड़न उनकर ना खाली सामाजिक, आर्थिक आ सांस्कृतिक व्यवस्था में शोषण भइल बलुक इनकरा लोगन साथे अमानुषिक वेवहारो भइल ओकरे के हमनी दलित मानेनी आ दलित साहित्य के उहे केन्द्र में होखेलें।

दलित के संगे साहित्य जुड़ जाए त 'नकार' साहित्य हो जाला इ नकार सामाजिक व्यवस्था, धार्मिक, आर्थिक भा परम्परा के हो, भाषा भा क्षेत्र, नस्ल, रंग, वर्ण भा जाति के होखे।

अइसन मानल जाला कि दलित साहित्य के लेखन मराठी साहित्य से शुरू भइल। बाद में 1972 में हिन्दी में आइल, फेर आगे चलि के तमिल, तेलुगु, कन्नड़, गुजराती भा दोसर भाषा में आइल।

देखल जाय त मध्यकाल में सन्त रविदास आ सन्त कबीर जाति–पाति, ऊँच–नीच के भेदभाव आ कर्मकाण्ड आ पाखण्ड के खिलाफ खूब अलख जगवले। बाकिर आधुनिक संदर्भ में 1958 ई. में दलित साहित्य पहिलका बेर प्रयोग में आइल जब महाराष्ट्र दलित साहित्य संस्था के गठन मुम्बई में भइल, जवन फुले आ अम्बेदकर के विचार से प्रेरित हो के एगो आन्दोलन शुरू कइलस। उहे दलित साहित्य के आन्दोलन के पहिलका सोपान रहे।

भोजपुरी भाषा में काव्य के यानि पद्य लेखन विगत 7वीं शताब्दी से होखत बा बाकिर एह भाषा के आदि कवि कबीर (जवन हिन्दी के भक्तिकाल/मध्यकाल में गिनल जानी) उनकरे से दलित साहित्य के सूत्रपात मानल जा सकेला। बाकिर आधुनिक दलित काव्य के परम्परा में 'हीराडोम' के 'दलित विमर्श के उद्घोषक कवि' कहल जा सकेला जइसन डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह, आपन किताब "आधुनिक भोजपुरी के दलित कवि और काव्य" में लिखले बानी।

दलित चिंतक माता प्रसाद दलित साहित्य के प्रमुख विद्या में लिखत बानी कि 'हीरा डोम' ने भोजपुरी भाषा में अपने पीड़ा और दर्द को व्यक्त किया जिसे सरस्वती पत्रिका ने सन् 1914 ई० में छापा गया जिसमें दलित शिकायत करता है –

हमनी के इनरा के निगिचे न जाइलें जा
पाँके में से भरि–भरि पिअतानी पानी।
पनही से पिटि–पिटि हाथ गोड़ तुड़ि देलें,
हमनी के एतनी काहे के हलकानी।"

तैयब हुसैन पीडित 'भोजपुरी कविता में दलित विमर्श' में लिखत बानी कि 'हीरा डोम के काल हिन्दी साहित्य के इतिहास में द्विवेदी काल रहे। महावीर प्रसाद द्विवेदी के सम्पादन में निकलल 'सरस्वती' पत्रिका में सितंबर 1914 ई० में छपल उनकर 'अछूत की शिकायत' कविता के पहिल दलित–विमर्श के कविता कुछ विद्वान मानेलन। एह में कवनो शक नइखे कि हीरा डोम के ई कविता जाति–भेद, आ छूआछूत के बडा मार्मिक वर्णन बा –

हड़वा मसुइया के देहियाँ ह हमनि कै
ओकरे के देहियाँ बभनओ कै बानी।
ओकरा के घरे–घरे पूजवा होखत बा जे
सगरै इलकवा भइलैं जजमानी।

इहाँ साफ बा कि दलित साहित्य ब्राह्मणवाद के खिलाफ,उग्र सामाजिक विद्रूपता के खिलाफ मुखर आवाज देवे ला एगो प्रतिशोध के साहित्य रहे आ हीरा डोम के ओह भोजपुरी कविता में इ साफ लउकत बा।

हीरा डोम के एह कविता के बारे में बतावत डॉ. राजेन्द्र सिंह कहत बानी – "हीरा डोम की यह कविता हिन्दू समाज में व्याप्त जाति–प्रथा पर सीधे चोट करती है। समाज का एक तबका आराम से बैठकर खा रहा है और दूसरा तबका काफी श्रम करने के बावजूद भी दानें–दानें के लिए मोहताज है।"

इ कहल गलत ना होई कि भोजपुरी भाषा आधुनिक दलित साहित्य के एगो शुरूआती बिन्दू हऽ जहवाँ से हिन्दी का अउर दोसरो भारतीय भाषा में दलित साहित्य के चलन

शुरू भइल। प्रो. चमन लाल 'दलित साहित्य एक मूल्यांकन' में लिखत बानी – 1947 ई. के बाद के हिन्दी साहित्य व विशेषतः 1970 के बाद 'हिन्दी साहित्य में दलित स्तर और भी प्रबल रूप से उभरे हैं। 1990 के बाद तो 'दलित ही दलित लेखन कर सकता है' ऐसे नारे भी उभरे है। (पृष्ठ संख्या 16) कहे के ना होई कि हीरा डोम के एह भोजपुरी कविता में दलित कविता के बीज 1914 में पड़ गइल रहे आ भोजपुरी इहाँ हिन्दी से बीस पड़ल। हीरा डोम के कविता 'स्वानुभूति' के कविता हऽ। उ अदमी जे सामाजिक, अमानुषिक, अमानवीय पीड़ा के खुदे भोगले बा। देखीं ना एह पंक्तियन के –

हमनी के राति दिन मेहनत करीलें जा
दुइगो रूपयवा दरमहा में पाइबि,
ठकुरे के सुख से त घर में सुतल बानीं
हमनी के जोति–जोति खेतिया कमाइबि।

'आधुनिक भोजपुरी काव्य में दलित चेतना' आलेख में (पृष्ठ संख्या 45, भो. वि जु. 2013) में पंकज लिखले बाड़न – दलित साहित्य में व्यक्त पीड़ा खाली उहे कवि के नइखे। उ सभ दलितन के पीड़ा हऽ। पंकज के बात पर प्रो.शत्रुघ्न कुमार के आलेख 'दलित चेतना' (दलित आंदोलन के विविध पक्ष, पृष्ठ 9 आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2005) के छाप लउकत बा जहवाँ प्रो. कुमार लिखत बानी, दलित चेतना का शाब्दिक अर्थ हुआ दबे हुए में हलचल होना।

डॉ. मैनेजर पाण्डेय फरका फरका के लिखत बानी कि भोजपुरी काव्य में आधुनिक जागरण के बीज 'हीरा डोम के कविता' 'अछूत की शिकायत' में दिखाई पड़ेला। एह कविता में सच्चाई आ समाज के क्रूर, घृणित, विषैला आ शोषक चेहरा नजर आवेला जवना के भारतीय समाज के जातिवादी चेहरा कहल जाला।

हीरा डोम के कविता केतना अब प्रासंगिक बा उ रउरा सभे समाज में देखि आ अनुमान लगायीं।

18 मई, 2014 के हीरा डोम के कविता 'अछूत की शिकायत' के शताब्दी साल पर के उपलक्ष में एकर प्रासंगिकता पर एगो गोष्ठी दिल्ली में अखिल भारतीय भोजपुरी लेखक संघ के द्वारा आयोजित भइल जेमे युवा साहित्यकार लोग आपन आपन विचार राखल जेकरा से प्रभावित होखे हम इ अंक प्रकाशित करत बानी। एही गोष्ठी में आइल साहित्यकार नवल किशोर निशांत, संजय ऋतुराज, योगेश सिंह, राजेश कुमार मांझी आपन आपन आलेख पाठ कइनी जवन ओही लेखा एह पत्रिका में छपल जा रहल बा। हिंदी के सुविख्यात भाषाविद डॉ.राजेंद्र प्रसाद सिंह जी के किताब 'आधुनिक भोजपुरी के दलित कवि और काव्य' में अनेकानेक कवियन के नाम आइल बा जेकरा में मारकंडे दास जी के मोची बतावल गइल बा। एही किताब में हीरा डोम, रसूल मियां, भिखारी ठाकुर, नारायण महतो, दुर्गेन्द्र अकारी, राम जियावन बावला, आदि के नाम आइल बा। एही किताब से हीरा डोम पर लिखल आलेख एह पत्रिका में शमिल कइल गइल बा।

चंपारण से डॉ. गोरख प्रसाद मस्ताना, राम चन्द्र राही आ चन्द्रभान राम के संगे संगे भगताही पंथ के महंत जी श्री राम रूप गोस्वामी जी के रचना एह अंक में लिहल गइल बा जवन भोजपुरी दलित परंपरा के उकेरत बा।

उहे भोजपुरी कहानी में दलित चेतना में उजागर करे वाला प्रो. शत्रुघ्न कुमार,के एगो किताब आईल बा – भ्रष्टाचार, एमहूँ सामाजिक भ्रष्टाचार पर कईगो कहानी बा जवन लोगन के आंखि खोले ला काफी बा। उहों के एगो कहानी स्वीकारोक्ति एह में राखल बा। कोलकता में भोजपुरी के झंडा ढ़ो रहल भाई रामजीत राम के एगो छोट आलेख शामिल कइल गइल बा संगे–संगे आसिफ रोहतास्वी जी के एगो गजलो। कोशिश बा कि एह पत्रिका में भोजपुरी के सामग्री अनुवाद द्वारा हिंदी आ इंग्लिश में भी परोसल जाव एही बात के धेयान में राख के एह पत्रिका में तीनू भाषा के उपयोग कइल गइल बा, बाकिर एगो बात पक्का बा कि बात जब होई भोजपुरी के ही होई एह में कवनो किन्तु भा परन्तु नइखे।

अंत में हीरा डोम के कविता 'अछूत की शिकायत' के प्रकाशन के 100 साल सितम्बर–2014 में पूरा हो जाई, रउरा सभे देखीं कि उहाँ के कविता के प्रासंगकिता केतना अभियो बरकरार बा ?

हम आभारी बानी दलित चिंतक आदरणीय कँवल भारती जी के, डॉ. राजेंद्र प्रसाद सिंह जी के, संजय कुमार जी के जे सभे आपन आलेख छापे के अनुमति देनी। कवर फोटो खातिर भाई विनोद जी (झारखण्ड से) उहों के आभारी बानी। संजय कुमार जी के मदद से दलित चिंतक सतनाम सिंह जी के आलेख शामिल बा। एह संदर्भ में इ कहल उचित होई कि महावीर प्रसाद द्विवेदी ना भोजपुरी भाषा ना रहीं।

पत्रिका रउरा हाथ में बा नीमन बेजाय के फैसला करब, निहोरा बा।

जय भोजपुरी!

संतोष कुमार

भोजपुरी दलित विमर्श के उद्घोषक कवि हीरा डोम

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह

यह सर्वविदित तथ्य है कि हीरा डोम दानापुर की सैनिक छावनी में एक सफाईकर्मी थे। परन्तु मूलतः वे दानापुर के रहनेवाले नहीं थे। कारण कि पटना से सटे दानापुर इलाके की भाषा मगही है, जबकि हीरा डोम की कविता 'अछूत के शिकायत' विशुद्ध भोजपुरी में लिखी गई कविता है। यह कविता सर्वप्रथम 'सरस्वती' पत्रिका में 1914 ई. में छपी थी। 1914 ई. में भारत अंग्रेजों का गुलाम था। उस वक्त दानापुर की सैनिक छावनी आम लोगों के लिए प्रतिबंधित थी। आज की तरह भारी पैमाने पर भोजपुरी भाषी लोगों का आना-जाना वहाँ नहीं था। इसलिए यह तय है हीरा डोम मूल रूप से दानापुर के निवासी नहीं थे। उनकी कविता विशुद्ध भोजपुरी में है। इसलिए यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि वे भोजपुरी इलाके के किसी स्थान से जाकर दानापुर की झोपड़पट्टी में बस गए थे।

डॉ. शुकदेव सिंह ने कहा कि हीरा डोम मूलतः बेतिया-चंपारण इलाके के थे। परंतु उनकी बात को 'अछूत की शिकायत' कविता की भाषा सीधे-सीधे खारिज कर देती है। जैसा कि हम जानते हैं कि भोजपुरी की कई बोलियाँ हैं। डॉ. जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने चार बताई है – उत्तरी, दक्षिणी, पश्चिमी तथा नगपुरिया। इनमें उत्तरी के भी दो रूप हैं – सरवरिया और गोरखपुरी। भोजपुरी की इन सभी बोलियों के प्रमुख लक्षणों से अवगत हो जाएंगे तो हीरा डोम की मूल भूमि की पहचान करना कठिन नहीं रहेगा। आज की स्थिाति यह है कि घने जनसंपर्क के कारण विभिन्न क्षेत्र के लोग इतना प्रव्रजन करते हैं कि एक बोली दूसरी में स्वाभाविक रूप से घुल-मिल गई है और बोलियों की अलग-अलग पहचान दब सी गई है। परंतु हीरा डोम के समय में यह प्रव्रजन और जनसंपर्क आज की तरह घना नहीं था। इसलिए सर्वप्रथम हम उनकी भाषा को आधार बनाकर उनकी मूल भूमि की पहचान करेंगे।

जैसा कि हम कह आए हैं कि डॉ. शुकदेव सिंह ने हीरा डोम की मूल भूमि बेतिया, चंपारण इलाके में मानी है। कई लोग इस कवि को बनारस से दानापुर आया मानते हैं। पर सच्चाई कुछ और है। कारण कि बनारस अथवा चंपारण की भोजपुरी में भविष्यत काल के सामान्य अथवा संभाव्य किसी में भी 'जा' सहायक क्रिया का प्रयोग नहीं होता है। सहायक क्रिया 'जा' का प्रयोग पुराने शाहाबाद के संभाव्य भविष्यत एवं सामान्य भविष्यत रूपों में धड़ल्ले से होता है। कहना न होगा कि भोजपुरी की यह विशेषता किसी भी अन्य भोजपुरी इलाके में नहीं पाई जाती है। यह विशेषता मिर्जापुर से लेकर वाराणसी, बस्ती, आजमगढ़ तथा चंपारन तक कहीं नहीं है। कवि हीरा डोम की कविता में यह सहायक क्रिया 'जा' भविष्यतकाल के संदर्भ में खूब प्रयुक्त हुई है। उदाहरणार्थः –

बभने के लेखे हम भिखिया न माँगब जा/
सहुआ के लेखे नहिं डांड़ी हम मारब जा/
भँटऊ के लेखे न कबित हम जोरब जा/

हम सिर्फ भविष्यत काल की सहायक क्रिया 'जा' के आधार पर ही यह दावा कर सकते हैं कि हीरा डोम मूलतः शाहाबाद जिले के थे। पुराने शाहाबाद में भी आज के भोजपुर जिला की भोजपुरी उनकी कविता की भोजपुरी से मिलती-जुलती है। भाषा के संबंध में 'अछूत की शिकायत' कविता एक और भाषावैज्ञानिक सूत्र की तरफ ध्यान आकृष्ट करती है। वह यह है कि हीरा डोम की कविता में सुनाइबि/उठाइबि/जाइबि/कमइबि जैसे क्रियात्मक प्रयोग मिलते हैं जो पुराने शाहबाद की भोजपुरी की अपनी विशेषता है। यदि यह विशेषता भोजपुरी क्षेत्र के किसी इलाके में है। परंतु यदि हीरा डोम बलिया क्षेत्र से आए होते तो वे 'खंभवा के फारि पहलाद के बँचवले' के स्थान पर 'खंभवा के फारि पहलाद के बँचवले हा' परंतु कविता में ऐसा प्रयोग नहीं है। इसलिए यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि हीरा डोम मूलतः पुराने शाहाबाद के उत्तरी इलाके के थे।

उनकी जाति के संबंध में कोई ज्यादा विवाद नहीं है। परंतु डॉ. शुकदेव सिंह उन्हें दुसाध मानते है। उनका तर्क यह है कि चंपारन में 'डोमड़ा' वैसे दुसाधों को कहा जाता है जो डांगर डोम का काम किया करते हैं। उनके अनुसार हीर डोम की जाति डोम नहीं बल्कि डोमड़ा थी। अतः वे मूलतः दुसाध थे। परन्तु डॉ. शुकदेव सिंह के तर्क में कोई खास दम नहीं है। भोजपुरी भाषा के सामान्य जानकार भी जानते हैं कि 'डोमड़ा' शब्द का प्रयोग भोजपुरी क्षेत्र में नीच स्वभाव वाला व्यक्ति के संदर्भ में किया जाता है। दुसाध को डोमड़ा कहने की परिपाटी पूरे बिहार में नहीं है। हल्ला–गुल्ला अथवा गाली–गलौज के अर्थ में डोमघाँउच अथवा डोमा डिगारी अवश्य चलता है। पर डोमड़ा किसी भी मायने में जातिसूचक शब्द नहीं है अपितु यह डोम से विकसित एक शब्द है जिसका अर्थ नीच स्वभाव वाला व्यक्ति होता है। यदि कोई कवि अपनी जाति के बारे में साफ–साफ लिख दिया हो, तब उस पर जाति विवाद का मामला नहीं बनता है। हीरा डोम ने तो साफ लिखा है –

कहवाँ सुतल बाट सुनत न बाटे अब
डोम जानि हमनि के छुए से डेरइले।।

उसका अर्थ बिलकुल साफ है कि हीरा वस्तुतः डोम थे। यह वहीं हिंदुओं की एक निम्न श्रेणी की जाति है जो बाँस की दौरी, सूप आदि बनाती है। परन्तु गाँवों में दुसाध जाति के लोग प्रायः चौकीदारी का काम करते हैं। इसलिए यह तय है कि हीरा डोम की जाति पर विवाद उठाना सत्य को झुठलाना है।

हीरा डोम की कविता एक सधे हुए कवि का रचना है। यह कवित वर्णिक है। इसका छंद मनहरण घनाक्षरी है जिसमें 16 या 15 वर्ण पर यति होती है और जिसका अंतिम वर्ण गुरू होता है। निश्चित रूप से 'अछूत की शिकायत' अपने संरचना–शिल्प के कारण याद की जाएगी। परंतु इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि यह हीरा डोम की पहली रचना नहीं रही होगी। भाव, संरचना–शिल्प और प्रतिपाद्य की दृष्टि से यह कविता अत्यंत बेजोड़ है। इसीलिए यह कहा जा सकता है कि यह कविता किसी सधे हाथों की रचना है और हाथ तो तभी सधते हैं, जब कोई रचनाकार इसका पूर्वाभ्यास करता है। कहना न होगा कि 'अछूत के शिकायत' के पहले और बाद में भी हीरा डोम ने अपनी कई रचनाएँ प्रस्तुत की होंगी। परन्तु समय के साथ–साथ उनकी सभी रचनाएँ इतिहास के नीचे दफन हो गईं। यदि 'अछूत के शिकायत' भी 'सरस्वती' जैसी तथाकथित प्रतिष्ठित पत्रिका में नहीं प्रकाशित होती तो यह भी इतिहास के नीचे दफन हो जाती।

इतना ही नहीं, यह भी सत्य है कि हीरा डोम की तरह और भी कई प्रतिभाशाली कवि उस वक्त मौजूद थे। परन्तु वे हिन्दी साहित्य के इतिहास की मुख्य धारा में नहीं आ सके। ऐसा हीरा डोम के पहले भी हुआ, बाद में भी हुआ और आज भी हो रहा है। डॉ. जयप्रकाश कर्दम ने लिखा है कि हाल के वर्षों में इस दिशा में नई खोजों से कुछ नए तथ्य सामने आए हैं। भारतेंदु हरिचंद्र के समकालीन 'मार्कण्डे' दलित कवि थे। वे 'चिरंजीत' नाम से लिखते थे। वे गाजीपुर के रहने वाले तथा मोची थे। उसी काल में इलाहाबाद निवासी 'परसन' नामक दलित कवि भी स्वामी अछूतानंद हरिहर है। अछूतानंद की पहली पुस्तक 'हरिहर भजनमाला' 1917 ई. में आगरा से प्रकाशित हुई थी। कहने का तात्पर्य यह है कि हीरा डोम का रचना–संसार और भी व्यापक रहा होगा और यह भी कि और भी कवि उनके समय में मौजूद रहे होंगे जो दलित वर्ग से आते होंगे। पर सभी काल–कवलित हो गए। जरूरत इस बात की है कि उन कवियों की हम तलाश करें जो अपनी प्रतिभा के रहते हुए भी काल के गर्त में समा गए हैं। 1914 ई. में छपी हीरा डोम की कविता की परिपक्वता को देखते हुए यह सहज अनुमान किया जा सकता है कि वे भिखारी ठाकुर से एक दो वर्ष उम्र में बड़े होंगे। इसलिए उनका जन्मकाल 1885 या 1886 ई. के आसपास माना जा सकता है। प्रस्तुत है यहाँ हीरा डोम की वह ऐतिहासिक कविता का मूल पाठ –

हमनी के राति दिन दुखवा भोगत बानी
हमनी के सहेबे से मिनती सुनाइबि
हमनी के दुख भगवनवो न देखता जे
हमनी के कब से कलेसवा उठाइबि
पदरी सहेब के कचहरी मे जाइबि जा
बेधरम होके रंगरेज बनि जाइबि
हाय राम! धरम न छोड़त बनता बा जे
बेधरम होक कइसे मुँहवा देखइबि।।1।।
खभंवा के फारि पहलाद के बँचवले जे
ग्राह के मुँह से गजराज के बँचवले
धोती जुरजोधना के भइया छोरत रहे
परगट होके तहाँ कपड़ा बढ़वले
मरले खनवा के पलले भभिखना के
कानी अँगुरी पे धके पथरा उठवले
कहवाँ सुतल बाटे सुनत न बाटे अब
डोम जानि हमनी के छुए से डेरइले।।2।।
हमनी के राति दिन मेहनत करीले जा
दुइगो रूपयवा दरमहा में पाइबि
ठकुरे जे सुख से त घर में सुतल बानी

हमनी के जोति–जोति खेतिया कमाइबि
हकिमे के लसकरि उतराल बानी जे
त अइओं बेगरिया में पकरल जाइबि
मुँह बान्हि ऐसन नोकरिया करत बानी
ई कुलि खबरि सरकार के सुनाइबे।।3।।
बभने के लेखे हम भिखिया न माँगब जा
ठकुरे के लेखे नहिं लउरी चलाइबि
सहुआ के लेखे नहिं डोड़ी हम मारबजा
अहिरा के लेखे नहिं गइया चोराइबि
भँटऊ के लेखे न कबित हम जोरब जा
पगड़ी न बान्हि के कचहरी में जाइबि
अपना पसीनवा के पइसा कमाइबि जा
घर भर मिलि–जुली बाँटी–चोटि खाइबि।।4।।
हड़वा मसुइया के देहियाँ ह हमनी के
ओकरे के देहिया बभनओ के बानी
ओकरा के घरे–घरे पुजवा होखत बा जे
सारे इलकवा भइलें जजमानी
हमनी के इनरा के निगिचे न जाइले जा
पाँके में से भरि–भरि पिअतानी पानी
पनही से पिटि–पिटि हाथ गोड़ तुड़ि देलें
हमनी के एतनी काही के हलकानी?।।5।।

हिंदी अर्थ : हीरा डोम की यह कविता हिंदू समाज में व्याप्त जाति–प्रथा पर सीधे चोट करती है। समाज का एक तबका आराम से बैठकर खा रहा है और दूसरा तबका काफी श्रम करने के बावजूद भी दाने–दाने के लिए मोहताज है। कवि हीरा डोम ने अपने अछूत जीवन की संपूर्ण वेदना को इस कविता के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। वह कहता है कि हम लोग रात–दिन कष्ट भोग रहे हैं और यह विनती अपने साहब को सुनाना है। कारण कि हम लोगों का दुख ईश्वर भी नहीं देख रहा है। तब आखिर हम लोग कब तक यह कष्ट भोगते रहेंगे। मेरा मन तो यह कहता है कि पादरी साहब की कचहरी में उपस्थित होकर अपना धर्म–परिवर्तन कर लें। परन्तु दूसरा मन धर्म–परिवर्तन से रोकता है कि आखिर तुम ऐसा करके और बेधर्म होकर समाज के समक्ष कैसे मुँह दिखलाओगे? दूसरे छंद में कवि पौराणिक प्रसंग को याद करता है और कहता है कि तुमने कभी खंभे को फाड़कर भक्त प्रहलाद की जान बचाई है और कभी ग्राह के मुँह से गजराज की रक्षा की है। इतना ही नहीं, तुमने तो चीरहरण के वक्त दुर्योधन के खिलाफ द्रौपदी की रक्षा भी की है। तुम्हारे रक्षात्मक कार्यों की एक लंबी सूची है। तुमने रावण को मारकर विभीषण का पालन किया है। कृष्णावतार में तुमने अपनी कानी अँगुली पर गोवर्द्धन पर्वत को उठाया है। पर मेरी विपत्ति क समय तुम कहाँ सो गए हो कि सुनते ही नहीं हो। क्या तुम मुझे डोम समझकर छूने से डर रहे हो? तीसरे छंद में कवि ने अपने कठोर श्रम का वर्णन किया है जिसके बदले में दो रूपया प्रतिमाह वेतन मिलता है। भू–स्वामी सुख से अपने घर में सोए रहते हैं और हम लोग खेत जोत–जोतकर कमाते हैं। हाकिम की जब फौज आती है, तब वह भी बेगारी करवाती है। हम तो एक सफाईकर्मी हैं जो मुँह बाँधकर अपनी सेवा देते हैं। सफाईकर्मी अपना मुँह कपड़े से बाँधकर सफाई किया करते हैं ताकि गंदगी की दुर्गंध और कीड़े से बचा जा सके। तब यह तय है कि हीरा डोम सफाईकर्मी ही थे। मुझे ये सभी खबरें सरकार को सुनानी है। हम तो ब्राह्मणों की भाँति भीख भी नहीं मांग सकते हैं। हम तो क्षत्रियों की भाँति लाठी भी नहीं चला सकते हैं। हम तो साहुओं की तरह डंडी भी नहीं मार सकते हैं। हम तो अहीरों जैसा गाय भी नहीं चुरा सकते हैं। हम तो भाँटों की तरह मनगढंत प्रशस्तिमूलक कविताएँ भी नहीं रच सकते हैं। हम तो पगड़ी बाँधे कचहरी में भी नहीं जा सकते हैं। ये सभी कर्म हम लोगों की आत्मा के खिलाफ हैं और समाज इसकी छूट भी हमें नहीं देता है। हम लोग तो सिर्फ पसीना कमानेवाले जीव हैं। पुनः उन पसीने की कमाई को हम लोग आपस में बाँटकर खाते हैं। अंतिम छंद में हीरा डोम ने जातिगत आधार पर ऊँच–नीच की बात को तार्किक ढंग से खारिज करता है कि शूद्र और ब्राह्मण दोनों का शरीर एक जैसे हाड़–मांस से बना हुआ है। पर ब्राह्मणों की पूजा क्यों घर–घर में की जाती है? यहाँ तक कि उसकी यजमानी पूरे इलाके में चलती है। दूसरी तरफ उसी हाड मांस से बने हुए डोमों को क्यों नहीं कुएँ के पास पानी भरने के लिए जाने दिया जाता है? हम लोग तो कीचड़ से पानी निकालकर पीने के लिए विवश हैं। इतना ही नहीं, यदि हम लोगों से किसी सवर्ण की चीजें नापाक हो जाती हैं तो हमें जूतों से पीटा जाता है। आखिर क्यों हम लोगों को इतना परेशान किया जाता है।

(लेखक अंतर्राष्ट्रीय ख्यात भाषा वैज्ञानिक हैं।)

'अछूत के शिकायत' एगो प्रासंगिकता

डॉ.गोरख प्र. मस्ताना

एगो कहाउत बा जे जेकरे पाँव न फटल बेवाई, से का जानी पीर पराई। दलित के भूख, दुख, अभाव आ गरीबी पर लिख के ना जानी जे केतना लोग महान हो गइल, धनवान हो गइल, बाकिर दलित उहँवे बा जहँवा काल्हु रहे। तनिको नइखे टसकल, ओकर दुख, ओकर गरीबी भा उपेक्षा अइसन लागेला जइसे ओकर दुख ना हऽ अंगद के पाँव हऽ। बातो साँच बऽ, गरीबी पर लिखल भा कुछु बोलल अलगे बात हऽ आ भोगल एगो अलगे बात। एह गरीबी के सम्बन्ध कवनो अछूत भा शूद्र से होखे त बुझीं कि दुख दूना ना चौगुना हो गइल। सदी बीत गइल, अछूत अछूत शब्द के ढ़ोअत, आँख में आँसू के बोअल, निमन चीकन दिन के जोहत, ना केहू पुछवईया ना केहू देखवईया। हँऽ समय के साथे अछूत वोट बैंक जरूर हो गइल 'दलित वोट बैंक'। ना मर सकल अछूत, नीच, शूद्र, सोलकन भा छोट जतिया जइसन विशेषण जवन ना जानी जे कहिया ले तथाकथित बड़का लोग ढ़ोअत रही, गरीब के दुअरा पर जाति के छाँट बोअत रहीं। वर्ण व्यवस्था में काम के साथे अदमी के जाति के बान्हे के जे व्यवस्था खड़िआइल बा, आज उ सूरसा के नीयर अदमी के अधिकार के लील रहल बा। एहो अधिकार पर सामाजिक कुठाराघात के, अन्याय के भा उपेक्षा के पीड़ा हीरा डोम के भोजपुरी रचनन में लउकेला जवन चिल्ला चिल्ला के एगो अछूत भा दलित शब्द के पीड़ा भोगे वाला मनई के विपत के बखाने भर ना हऽ, इतिहास में ओकरा सँगे भइल अन्याय के व्यथा कथा हऽ।

करुणा के कगार पर खड़ा होके, आँख में अँखुआत लोर के पढ़े ला, समय केकरा पाले बा? सभे अपना अपना स्वारथ के स्वर्ग में सुख के सरियावत लउकत बा तऽ एह बीचे कवनो अछूत के दुख दर्द समझे के समये केकरा पाले बा? एक गो भगवान के बनावल मनई सभे बा बाकिर धरती के भगवान लोग जाति पाति के छुआछुत के भरम जाल में अदमी अदमी के अझुरावे के जवन जुगत लगावले बाड़े उ अपना अहंकार के शांत करेला नू बा।

साहित्य समाज के दरपन हऽ। भोजपुरी काव्य के महान कवि हीरा डोम के साहित्य विशेषकर उनकर लिखल कविता उन्नसवीं सदी के पहिलका चरन के सामाजिक विषमता के खुलल दस्तावेज बा। अहंकारी समाज के शोषण आ दलित समाज पर होखवाला भीषण अत्याचार के महागाथा बा। 1914 में 'सरस्वती' में जेकरा रचना के स्थान मिलल उ कवनो साधारण साहित्यकार थोडही रहलें। ओ बेरा 'सरस्वती' में जेकर रचना छपे, ओकर मोल एगो अलगे रहे। 1921 में कथा सम्राट प्रेमचन्द्र के पहिलका कहानी सरस्वती में छपल। कुछ हीं दिन के बाद उनकर लिखल 'ठाकुर के कुँआ' कहानी बड़ा लोकप्रिय भइल। ओ कहानी में भी एगो दलित आ अछूत के उपेक्षा के शोषण के बड़ा मार्मिक चित्रण बा। एही संदर्भ में बिना कोताही के कहल जा सकेला कि 'ठाकुर के कुँआ' कहानी हीराडोम के 'अछूत की शिकायत' शीर्षक कविता के भावभूमि से उठावल गइल कहानी बा जवरन हीरा जी लिखले बानी–

हमनी के इनरा के निगिचे ना जाइलें जा

पाँकि में से भरि भरि पीअतानी पानी। त कवनो झूठ थोडहीं बा। एतने ना प्रख्यात दलित साहित्यकार सीताराम दास के कहानी 'जुत्ते से पीटाई' के मार्मिक कथा जवन तथाकथित उच्च वर्ग के अंहकार के खिलाफ एगो बानगी बा ओकरो पृष्ठभूमि लगात बा जे हीराडोम के 'अछूत की शिकायत' से ही लिहल बा – जहवाँ लिखल बा–

"पनही से पिटि पिटि हाथ गोड़ तुरि देलें।
हमनी के एतनी काही के हलकानी।।"

ओइसे तऽ हीरा डोम के इ रचना अपना समय के दरपन बा, बाकिर 'अछूत के शिकायत' आजो ओतने प्रासंगिक बा, जेतना कालहु रहे। एक एक पंक्ति दलित, गरीब, अछूत भा वंचित समाज के दुर्गति के दुखद कहानी बा जवना के अछूत कहावे वाला लोग ओतने भोग रहल बा। आरक्षण के टुकड़ा फेंक के दलित समाज के भरमावे के षड़यंत्र त बहुते सफल हो गइल बाकिर बराबर के अधिकार कहवाँ मिलल। आजो एह देश में अइसन अइसन जगह बा जहवाँ मंदिर में दलित समाज के लोग के जाये के अधिकार नइखे। सवर्ण के देह आजो छुआत बा, ओही अदमी से जवना के भगवान अपना हाथे बनवले बाड़े।

दलित के आजुओ सवर्णलोग के मानसिकता ओतने संकीर्ण बा जेतना पहिले रहे।

धरम आ ईमान दू गो अइसन शब्द बा जवना के जाल में आजुओ गरीब आ दलिते अझुराइल बा। तबहूँ अपना धरम इमान के बचावे के जवन विचार ओकर पाले बा सवर्ण समाज में कहवाँ बाऽ? उ त फारवार्ड हो गइल पाइसा के आगू 'ना' ओकर धरम बा ना ईमान, बस बा तऽ गरब गुमान। 'सई-सई' चूहा खाके बिलाई भइनी भगतीन' के कहावत चलावे वाला लोग के बस पइसा चाहीं पइसा। घर के इज्जत नीलाम हो जाय, त हो जाय दीं। एही इज्जत के बनावेला गरीब जान दे रहल बा। आउर जान दे के बचावलो बा। कुकरमी आ बेसरमी मोंछ पर ताव दे के घूम ता काहे कि उ त बड़का बा। 'अछूत की शिकायत' कवितो में अपना धरम ईमान के बचा के राखे के एगो अछूत के जवन विचार बा ओकरा के देखल जरूरी बा–

"पदरी साहेब के कचहरी में जाइबि जा,
बेधरम होके रंगरेज बनि जाइबि।
हाय राम! धरम न छोड़त बनत बा जे,
बेधरम होके कइसे मुहंवा देखाइबि।"

ई भाव ओ समाज के बा जवन अछूत कहाता। सवर्ण लोग कुल्ह कुकरम करि के बड़का कहाता। जात धरम छोडिओ के बड़का बा।

हीरा डोम के रचना 'अछूत की शिकायत' खाली कविता ना हऽ। सदमा के धधकत भाव के प्रकटीकरण हऽ। अछूत के हाय के आगी हऽ। ओकरा प्रतिशोध के तलवार हऽ। गीता में भगवान कृष्ण से वर्ण-व्यवस्था के बखान सुनि के बड़ा पीड़ा होला। जब भगवान कृष्ण खुदे वर्ण व्यवस्था आउर ओकरा कर्म के निर्धारण कर दिहले बानी त शोषक समाज अहंकारी मनई ओकरे के हथियार बनाके शुद्ध भा दलित के शोषण करत बा तऽ एमें अचरज का बा? गीता में कहल बा –

"कृषि गोरक्ष्य वाणिज्य वैश्यकर्म स्वभावजन।
परिचर्यात्मक हम कर्म शुद्रस्यापि स्वभाव जन।।"

कृषि कर्म, गो रक्षा आउर व्यापार वैश्यों का स्वाभाविक कर्म है, शुद्र का कर्म श्रम तथा दूसरा की सेवा है तथा कथित उच्च वर्ग के लोग एही के भगवान के मंत्र मान के शोषण कर रहल बा तऽ एकर दोष कृष्ण के नइखे त केकर बा? हीरा डोम एही भाव के आपन कविता 'अछूत की शिकायत' में लिखत कहत बानी –

मरलें रवनवा के पलले भभिखना के,
कानी अंगुरी प धइके पथरा उठवलें।
कहवाँ सुतल बाटे सुनत न बाटे अब,
डोम जानि हमनी के छुए से डेरइलें ।

लागत बा साइत भगवानो के मन में 'छुआछुत' बा। तबे नू एगो अछूत कहावे वाला 'समाज' उद्धार ला सामने नइखन आवत। कवि हीराडोम अपना कविता के सहारे भगवानो के उलाहना देत उनका के दुअँखा बतावे में सकुचात नइखन। इहे दलित के विद्रोह हऽ। दलित भा अछूत कहावे वाला समाज के समानता के अधिकार मिले में देरी, विद्रोह के आग के अउरे भड़कइबे न करी।

आज के समाज में वर्ण व्यवस्था के कुचाल, अउरी टेढ़े भइल जाता। शकुनी के चाल नीयर, बडकन के सुझाव आउर अत्याचार के कहानी त रोजे सुने पढ़े के मिलेला। एह कुल्ह पर विचार कइला से साफ साफ लउकत बा कि हीरा डोम के 'अछूत की शिकायत' कविता अजहुओ ओतने प्रासंगिक बा, महत्वपूर्ण बा जेतना पहिले रहे। समय के सरूप बदलल कहाँ बा? अउरी कुरुप भइल जाता, समाज होखे भा सत्ता। दलित भा शुद्र कहावे वाला लोग हासिया पर आवत जा रहल बा तथा कथित बड़का लोग के मानसिक तानाशाही घटल कहाँ बा? हँऽ देखावे ला भरमावे ला अब कुछ कुछ हो रहल बा। लागत बा कि दलित भा अछूत के जिनगी में अबहियों अन्हारे बा। ना जानी उनका अँगना में नया बिहान कब उतरी? आ हीराडोम के 'अछूत के शिकायत' कब दूर होई।

(डॉ.गोरख प्रसाद मस्ताना 'भोजपुरी जिंदगी' के प्रधान संपादक है।)

■■■

गजल

शिवपूजन लाल विद्यार्थी

अब कतना हम मन के मारीं।
कुसमित अरमानन के जारीं।
जोहत बाट खड़ा रहलीं हम।
कब आवत बा आपन बारी।
उनुका खुस करे के खातिर
कबतक आपन बाजी हारीं
आपन-गैर तनिक ना बुझलीं
ना जनलीं हम दुनिया दारी।
झोंपड़ी त कम-से-कम चाहीं
नइखीं मांगत महल-अटारी।
कइसन न्याय, खटीं अतना, पर
दू रोटी पर आफत भारी ।

■■■

कहानी

स्वीकारोक्ति

प्रो. शत्रुघ्न कुमार

बमनपुरा के अम्बेडकर भवन में तीन दिन से दलित साहित्य पर सम्मेलन चलत रहे। ओह सम्मेलन में देश के कोना–कोना से आईल विद्वान लोग दलित साहित्य के विभिन्न विषय पर आपन–आपन आलेख प्रस्तुत करत रहन। हर रोज दुपहरिया होत अउर दोसरा सत्र समाप्त होतही बाहिर के परिसर में खाए के साजल टेबुल के नजदीक एकट्ठा होके सभे लोग पलेटन में रवाना लेके खाए के साथ साथे दलित साहित्य के उपर चर्चा करे लागस लोग। पहिलका दिन से इ साफ दिखाई देत रहे कि जवना विद्वान लोग देश के कोना–कोना से आपन–आपन आलेख प्रस्तुत करे आइल रहन लोग उनकरा अउर सभे छात्र लोगन के बीच दू फाड़ होत जात रहे। दलित साहित्य के लेके लोग दुगो भाग में बॅट जात रहन जा। हर रोज यही होत रहे। तीनो दिन ई बात के लेके खूब जोरदार बहस होत रहे कि का खाली दलित लोगे दलित साहित्य लिख सकेलन, अदलित नाही। वैसे दलित लेखक चिंतक लोग यही मानत रहे कि खाली दलित लोग ही दलित साहित्य लिख सकलेन अदलित नाही। काहेकि '' जाके पैर न फाटे बिवाई, उ का जाने पीर पराई। कुछु लोग एहू मानत रहे कि जवन अदलित लेखक दलित लोग के पीड़ा के गहराई से महसूस करके कहानी आदि लिखेलन उनकर साहित्य के सहानुभूति के साहित्य कहल जा सकेला।

सम्मेलन के तिसरका दिने सभै आलेख पढ़े जाए के बाद प्रश्नोत्तरी के दौरान यही बात के लेके गरमा–गरम बहस छिड़ गईल। तिवारी जी, शर्मा जी, सिंह साहब, गुप्ता जी, श्रीवास्तव जी, मुखर्जी बाबू आउर श्याम जोगलेकर, चुमकी पालीवाल, सतना राय, लोग इ माने खातिर तैयारे ना रहन जा कि अदलित दलित साहित्य ना लिख सकेलन। उ लोग एहू तर्क देवे लगलन कि दलित लोग के दुःख दरद के महसूस करे के कारण ही सभे चन्नई से कोलकत्ता से, मुम्बई से राजकोट से पूना अउर पटना आदि जगह से चलके एहीजवा एतना बड़ संख्या में दलित साहित्य पर चर्चा करे खातिर आईल बाडन लोग। उ लोग इ जाहिर ना होवे देलन कि जवना–जवना जगह से हवाई यात्रा कके यहीजवा पहुँचलन लोग उ सभे जगह उनकरा साथे दलित–पिछड़ा विद्वान लोग भी रहन जा। उ लोग खुदे जाति के दंश झेले के बावजूद सभै मै मुद्दा पर कहानी, उपन्यास, आलेख लिख–लिख के दलितन पर हो रहल अत्याचार के प्रकट करत रहन जा अउर जवना लोग दलितन के प्रताड़ित करत रहे लोग उनकरा के बेनकाबो करत रहन। काहोकि उ लोग दलित साहित्य से संबंधित आपन आलेखन में जीवन के सच्चाई के प्रकट करत रहन एकरे से उनकरा बमनपुरा आवे के इजाजत नाही मिलल। एगो अउरो सचाई एहू रहे कि उ सभे कॉलेजन, अउर विश्वविद्यालय के समिति के सभै अधिकारी लोग ब्राहम्णवादी ही रहे, एकरे से दलित साहित्य के नाम पर दूर–दूर हवाई जहाज कके आनंद लेवे के अधिकार तो खाली तिवारी, शर्मा गुप्ता, श्रीवास्तव, मुखर्जी अउर पालीवलवे लोग के रहे। दलित पिछड़ा के एकरा में ई सभै अधिकार ना रहें। हाँ इ जत्था में एगो–दूगो अईसन दलित लोग भी रहे जिनकर तलुआचाटु विचारधारा से सामाजिक न्याय के आंदोलन जरूर कमजोर भईल बा।

सम्मेलन के तिसरका दिन के आखिर के सत्र में यही मुद्दा के लेके बहस चल पड़ल रहे कि अदलित दलित साहित्य काहे नाही लिख सकेलन। तिवारी जी आँख तेररत अउर सभै के धमकावत लहजा में कहलन कि आखिर प्रेमचंदो तो यही प्रकार के साहित्य लिखले रहन। बजरंगी अउर गिर्गु सिंह भी उ सभा में दहाड़त अउर टेबुल पर मुक्का मारत तिवार जी के समर्थन करे लगलन। एह बीच में खरपतिया झाहो कहलन। उ जाँत–पाँत ना मानेलन एकरे से फाईव स्टार होटल में जाके आपन दलित मित्र के पइसा से खूब खाए पिएलन। ई बहस में दोसरा ओर

दलित–पिछड़ा चिंतक लेखक लोग जिनकर संख्या कम रहे ओहू लोग आपन–आपन विचार राखे लगलन। एह कार्यक्रम में बईठल तलुआचाटु दलित –पिछड़ा लोग माथा हने–होने घुमा–घुमाके दोनो पक्ष के समर्थन करे लगलन। एकरा माने उ लोग बिचलका बाला बन गईलन।

अध्यक्षता करत प्रो. नसीमुद्दीन सिद्धकी खाातिर सभा के संभालल मुश्किल हो गइल रहे। एह सभै तमाशा के बीच रविप्रकाश तीनो दिन के गतिविधियन पर बारीकी से नजर रखले रहन। उ दिल्ली से चलके बमनपुरा पहुचले रहन। उ खुद दलित लेखक रहन। ई सभै कुछ देख के आखिर उनकर धीरज के बाँध टूट गईल। उ मनही मन सोचलन, अब बहुत हो चुकल। बरिसन से ई मुद्दा पर वाद–विवाद सुनत–सुनत उनकर कान पाक गईल। अब ई अवसर पर सब हिसाब किताब कर ही लेवे के चाही। उ सम्मेलन में जोर–दार आवाज में आपन बात उठवलन। उनकर गंभीर आवाज सुनहते ही सभा में शांति छा गईल। सभे लोग उनकरा ओर टकटकी लगावले देखे लगलन।

अध्यक्ष प्रो0 नसीमुद्दीन सिद्की इशारा से रविप्रकाश के आपन बात करे के इजाजत देलन।

तिवारी जी फुसफुसात बजरंगी शर्मा के कहलन। हई ल अब ई चमरूद्दीन का कही?

झा कहलन अब देखी इ कवन तीर छोड़ी। सतना राया अउर चुमकी पालीवान के बीचो कुछ खुसरफुसर भईल।

रवि प्रकाश आपन बात रखलन– पिछला तीन दिन से हम यही देखतनी कि इ सम्मेलन में दलित साहित्य से जुड़ल गईल बहुत गंभीर–गंभीर पर्चा पढ़ल गईल, बाकिर ओकारा पर चर्चा ना कके सभे लोग यही बात पर अड़ गई बाड़न कि दलित साहित्य अदलित काहे नाही लिख सकेलन। एह विषय में हमार स्प्ष्ट कहनाम ई बा कि खाली दलिते लेखक दलित साहित्य लिख सकेलन। बाकिर हम ऐहूँ कहेके चाहतानी कि बराहमन लोग भी दलित साहित्य लिख सकेलन बसर्ते कि उ सच्चाई के साथे एहू लिखस कि सदियन से उनकर परदादा–दादा अउर अब खुदे उ लोग भी दलितन के, के तरह सतावत रहन अउर आजो के तरह से सतावतन जा। अउर उ ऐहू लिखस कि के तरह से उ लोग षडयंत्र कके अउर तरह–तरह के हतकण्डा अपनाके दलित लोग के शारीरिक, मानसिक अउर मार्मिक पीड़ा देत रहन अउर आजो दे ताड़न। उ के तरह से भारत के संविधान के अवहेलना कके आजो दलितन के प्रगति के राह में रोड़ा अटकावा ताडन। ऐहू सब लिखेके चाही। उ कनफेशन करत ई लिखस कि के तरह से इ देश के अनगिनत अनमोल दलित हीरा लोग के कादो के गहराई में दबा देले लोग। नाही तो उ दलित लोग जीवन के सगरे क्षेत्र चाहे डॉक्टरी होखे आ साहित्य गीत आ सिनेमा अउर आई टी चाहे विज्ञान सभे क्षेत्र में आपन प्रतिभा के बल पे देश के नाम तो उँचा करतन साथे–साथे देश के प्रगति में भी सहायक रहतन लोग। रविप्रकाश उदाहरण के तौर पर आदि काल से लेके वर्तमान काल तक के प्रतिभापुंज जेकरा में एकलव्य, फुले, अम्बेडकर, कॉशीराम, शैलेन्द्र अउर पी.टी उषा के नाम गिलवलन, रविप्रकाश के इस सब विचार के सुने के बाद ताली के गड़गराहट से सभागार गूंज उठल। तिवारी जी के अन्दर के जातिरूपी किटाणु जवन उनकर खून के खौलावत रहे उ रवि प्रकाश के प्रकट करल गईल विचार के सुनत हा शांत होके ढण्डा पड़ गईल।

सम्मेलन के खतम होऐ के बाद सभे प्रतिभागी के चेहरा पर संतोष के भाव व्याप्त रहे। बाकिर सतना राय, चुमकी पालीवाल, बजरंगी शर्मा के चेहरा पर खाली परेशानी के भाव झलकत रहे। यही समय देखल गईल। रामरवेलावन तिवारी उठके रवि प्रकाश के लगे पहुँच गईल रहन। उनकर अखियाँ डबडबा गईल रहे, उ कुछु कहेके चाहत रहन बाकिर उनकर जुबान खुलत ना रहे। उ बस रविप्रकाश के हाथ पकड़ के खाली जोर से दबवले रहन।

कुछ महीना के बाद पता चलल रहे तिवारी जी, एगो लंबा कहानी लिखले रहन जेकर नाम रहे ''पश्चाताप'' उ कहानी के 'उजाला' नामक पत्रिका में छपला के दुसरके दिन तिवारी जी गला में फंदा डालके आत्महत्या कर लेले रहन। उ कहानी में इ सब विस्तार से इ बात खातिर पश्चाताप कईल गईल रहे कि पिछला बीस बरिसन के दौरान उ अपना विश्वविद्यालय में प्रकाश गौतम नाम के एगो दलित शिक्षक के कैरियर चौपट करे खातिर कवना–कवना प्रकार के षडयंत्र रचले रहन। समूचा कहानी में तिवारी जी उ सभे बतिया के सचाई से लिखले रहन कि उ कवना–कवना तरीका से प्रकाश गौतम के शारीरिक, मानसिक अउर आर्थिक कष्ट देवे खातिर कतना तरह के जाल बुनले रहन। उ कहानी में एहू सब वर्णित रहे कि उनकरे कारनामा के चलते उनकर गाँव के बहुते दलितन के घर जलाके खाक कर दिहल गईल रहे अउर उनकरे चलते बहुते दलितन के जान से हाथ धोवे के पड़ल रहे।

पश्चाताप कहानी के पढ़त ही लोगन के मुँह से यही निकलत रहे। एकरो के तो दलित कहानी कहल जा सकेला।

रविप्रकाश के उठावल सवाल के जबाब आवे लागल रहे। बाकिर इ देश में सदियन से ही तरह के उठाईल गईल असंख्य सवालन के जवाब ठीक यही तरह से का ई देश के मिल पाई?

भोजपुरी कविता में दलित-विमर्श

तैयब हुसैन 'पीडित'

पहिले अनुसूचित जाति आ अनुसूचित जनजाति के लोगन खातिर गाँधी के चलावल 'हरिजन' शब्द के प्रचलन रहे, बाकी जब एहू से जातिगत बू आवे लागल त आज के सरकार, पत्रकारिता आ साहित्य इन्हन के 'दलित' शब्द से संबोधित करेला। अब जो एह शब्द से संबोधित करेला। अब जो एह शब्द के व्यापक अर्थ लीं, हर दबल, कुचलल, शोषित, पीड़ित मनई एह में आ सकेलन, चाहे उ औरत होखो भा मरद। बाकी, जब औरतन खातिर 'नारी विमर्श' के एगो अलगे खाता खुल गइल बा, एह में हम खाली अनुसूचित जाति आ अनुसूचित जनजाति के औरत–मरद पर ही विचार करब। हँ, चूँकि अब, पसमांदा (अत्यंत पिछड़ल) मुसलमान आ ईसाई लोगन के आरक्षणों के सिफारिश सच्चर समिति कइलक आ ई माने पर जोर बा की हिन्दू के जाति–वर्ग से दोसरा धर्म में गइल लोग ओही श्रेणी में गिनल जाई। जइसे–आदिवासी से ईसाई भइल लोग आदिवासी आ अनुसूचित जाति से मुस्लिम भा ईसाई भइल लोग अनुसूचित जाति का बरोबर। एह से एहू लोग के प्रसंगवश समेटल उचित बुझाता।

फेर 'विमर्श' के, इहाँ इन्हन के शोषण उत्पीड़न के चर्चा आ ओकरा प्रतिकार के अर्थ में लेहल जाई।

एह–सीमा–रेखा खिंचला के बाद हमर ध्यान 14वीं–17वीं सदी के लगभग 300 बरिस के भारतीय साहित्य में 'भक्ति–साहित्य' का ओर जाता, जेह में एगो सांस्कृतिक आन्दोलन का रूप में बडहन संख्या में दलित संत –कवियन के उभर देखे में आवता, जइसे–कबीर, रैदास, धन्ना, पीपा, सेन दादू, नानक, एक नाथ, तुका राम आदि। एह में कर्नाटक में उक्का महादेवी, राजस्थान के मीराबाई आ मुस्लिम समुदाय से आइल अकबर के एगो बीबी ताज बीबी जइसन औरत लोग अपना परिवार आ समाज से बगावत कइलक। कबीर के गिनती भोजपुरी में आदिकवि का रूप में होला। सुनींला, रदास आ कबीर एके गुरु स्वामी रामानंद के चेला रहस, जेकर मत रहे–

'जात–पाँत पूछे ना कोई,
हरि के भजे से हरि के होई'

रैदास के सच्चा भक्ति खातिर त एगो मुहबरे भोजपुरी में प्रचलित बा।

'मन चंगा त कठौती में गंगा'

कबीर दास के अपन अक्खड़ सुभाव आ पसमांदा मुस्लिम (जोलाहा) जाति गुने उपेक्षा के दंश शे के पडल। एक साथे उनकर दुश्मन सिद्ध नाथ का साथे मुस्लिम बादशाह का चलते इस्लाम धर्मावलम्बियों रहस। तबो कबीर जाति आ धरम के ढोंग पर चोट करे से बाज ना अइलन।

'मन ना रंगाए, रंगाये जोगी कपड़ा।
कनवा फराई जोगी जटवा बढ़वले,
दाढ़ी बढाई जोगी होई गइलें बकरा।
जंगल जाई जोगी दुनिया रमौले,
काम जराय जोगी बन गइले हिजरा।
मथवा मुड़ाय जोगी कपड़ा रंगौलें,
गीता बांची के होई गैले लबरा ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो,
जम दरवाजा बान्हल जइबे पकरा।'

हीरा डोम के काल हिंदी साहित्य के इतिहास के द्विवेदी–काल रहे। कुछ लोग महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में निकलल 'सरस्वती' पत्रिका में 1914 ई में छपल उनकर 'अछूत की शिकाइत' कविता में पहिल दलित–विमर्श के कविता मानेलन। एह में कवनो शक नइखे की ई कविता जाति–भेद आ छुआछूत पर बड़ा मार्मिक चित्रण बा–

हड़वा मसुइया कै देहियां है हमनी कै,
ओकरै के देहियां बभनओं कै बानी।
ओकरा के घरै घरै पुजवा होखत बाजे,
सगरै इलकवा भइलैं जजमानी।
हमनी के इनरा के निगिचे न जाइलेजां,
पांके में से भरि भरि पियतानी पानी।

पनही से पिटी पिटी हाथ–गोड तुरी दैले हमनी के एतनी काही के हलकानी' दुर्गा शंकर सिंह 'नाथ' के किताब 'भोजपुरी के कवित और काव्य' में 19वीं सदी के उत्तरार्ध आ 20 वीं सदी के पूर्वार्ध में जनमल एगो दलित कवि मारकंडे दास के कविता सहित चर्चा बा, जे जाति के मोची रहस। नाच में रहत रहत आ मेला–ठेला में गीत बना

के गावस। 'सावन फटाका' नाम से एगो किताब सिंगारिक रचना जाड़े बा। एह से उनका कविता के उदारहण दलित–विमर्श लायक हम नइखी बुझात। हँ, 1934 से पाहिले जनमल आ 28 मार्च 1999 के स्वर्गवासी भइल गाँव 'कथनथ' (सासाराम) के परगन राम (दुसाध) जरुर आपन कविता में दलित–विमर्श करत लउकताड़न, जब उ एके साथे अपना क्षेत्र के विधायक गोर जगन्नाथ सिंह आ सांसद करिया जगजीवन राम के बेइमां होए पर बाण चलावताडन। काहे कि ई लोग मिल के एगो नहर उनकरे खेत होखे निकालल आ कवि के अपना सीमित जमीन होय के बात पर ध्यान ना देलक। परगन राम आशु कवि रहस आ धर्मशास्त्र के बड़ा ढंग से आलोचना कइले बाडन–

'अपना मतलब से वेदशास्त्र बनावल गइल बा।
देके ईश्वर के नाम डेरावल गइल बा ।
सत चित आनंद मिलल त सच्चितानंद कहाइल
अइसन ईश्वर का सृष्टि में दुःख कहाँ से आइल?'

'जिगना मजार टोला' (गोपालगंज) के रहवइया पसमांदा वर्ग के आइल रसूल (1872– 1952 ई।) भिखारी ठाकुर के समकालीन आ उनके लेखा नाच–नाटक करस। उनकर कविता त एने ढेर मिलल ह, जवन जादेतर आजादी के लड़ाई, देश के बंटवारा आ गाँधी जी के हत्या पर केन्द्रित बा, बाकी उ हथुआ के तत्कालीन महारानी से मार खइले रहस। अंग्रेजी राज के सिकायत करत जेहल गइल रहस। एह तरे से एक साथे क्रमशः सामंतवाद आ पूंजीवाद से टकराव रसूल के एह सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बनावता– जइसे–

'छोड़ द गोरकी के अब तू खुशामी बालमा
एकर कहिया के करब गुलामी बालमा
देसवा हमर। बनल ई आके रानी
करेले हमनी पर ई हुक्मरानी
एकर छोड़ द अब दिहल सलामी बालमा।'

अरुण भोजपुरी के ईगो प्रबंधकाव्य छपल बा 'सर्वहारा के शिव'। अरुण भोजपुरी खुदे दलित समुदाय से आईला आ उहाँ के एह पंक्तियन में एके साथे कईक गो दलित जातियन के चर्चा के साथे विदेशी आर्य लोग के अत्याचार के बड़ा साफगोई से बखान बा–

'भारत में मूल आदिवासी तीन जाति रहे
आष्ट्रिक, द्रविड़ आ मंगोल रेस के
उनुका जिनिगिया में अगिया लगाइ देले
क्रूर आ कसाई आर्य आइके विदेस के'

अबले हमनी दलित रचित भोजपुरी कविता में दलित–विमर्श के बात देखत रहनी हँ जा, बाकी भोजपुरी कविता में दोसर वर्ग भी दलित के शोषण के बात एह लोग से कम ईमानदारी से नइखे उठवले हाथ कंगन को आरसी का ! 'जोंक नाटक में राहुल सांकृत्यायन के एगो कविता हीरा डोम लेखा ब्राह्मणवाद के जम के आलोचना करत बा–

'स्वारथ के जोडी जोड़ी पोथिया बनवलस बम्हना गइल सतनासी
झूठ तोर सधुआ धरवमा करमवा झूठ बम्हा के कासी'

आचार्य महेंद्र शास्त्री दलित के शोषण के बढ़हन हथियार मजहब के मानत बाडन–

'उंच नीच के भेद जहर बा
जवना के रक्षक मजहब
हिन्दुयन के असली टी वी
भक्षक, तक्षक बा मजहब।

आ एह शोषण के चरम गोरख पाण्डेय के कविता 'मैना' में बड़ा नाटकीय ढंग से आईल बा। असल में कविता के मैना आउर केहू ना, दलित आ सर्वहारा वर्ग बा, जवन तथाकथित सवर्ण आ शोषक वर्ग खातिर खेलौना मात्र बा, बस –

'एक दिन राजा मरले
आसमान में उड़त मैना
बान्ह के घर ले अइले मैना ना।
एकरे पिचले जनम के करम
कइली हम सिकार के धरम
रजा कहे कुंवर से अब लेके खे ल मैना
दे ख केतना सुन्दर मैना ना।
****
जबले खून पियल ना जाय,
टेबल कवनो काम न आय
राजा कहे कि सी ख
कइसे चूसल जाई मैना
कइसे स्वाद बढाई मैना ना।

कक्षा–9 खातिर, बिहार टेक्स्ट बुक पब्लिशिंग कारपोरेशन, पटना से छपल 'पान–फूल भाग–1 किताब में जो बलदेव प्रसाद श्रीवास्तव के कविता देखल जाव त हीरा डोम के कविता इयाद आ जाई, फरक खली एतने बा की उनका कन ई कविता एगो सवर्ण का ओर से चलता–

'गंवई का बहार बगइया का पास में
एकनी के घर ना खोभार बाटे बाँस में
जनगी भर जनलस ना कुँआ के पानी
तेहू पर कहेला हिनुए नू बानी।'

****
बाबू का बेटी के सादी का बेरा
भोरे से दुअरा लगावलेस ई डेरा
धइलस ई दउरा के पत्तल बिटोर के
कउआ आ कुकुर से छीन के आ छोर के
अठवरन ई जूठे पर कइलस गुजारा
कफन के कपड़ा बा एकर सहारा
****
डगरा में रच दी कमल–फूल–पत्ती
बारी ना घर में कबो तेल–बत्ती
सिंघा बजा के जगत के जगवलस
भय–भूत भारत का मन से भगावलस
अपना के अइसे ई कइसे बनवलस
दुनिया बढ़ल, ई कदम ना बढ़वलस।

बहुत पहिले 'भोजपुरी लोक पत्रिका' (संपादकः राजेश्वरी शांडिल्य) आ पुस्तक 'एक पर एक' (संपादक –धीरेन्द्र बहादुर चाँद) में छपला पर एह पंक्तियन के लेखक के एह काव्य–पंक्तियन पर कइक लोग के अमनख लागल रहे, जवना में स्वर्गीय महेश्वराचार्य जी भी रही–

'काल्ह शम्बूक के हो गईल फांसी
आज बालि मरा गइल होइहन
ऊ जे हरिजन के गाँव लहकत बा
राम के आन हो गईल होई।

बाकि अब त जल–जंगल–जमीन लेके आदिवासी क्षेत्रन के हो रहल माओवादी संघर्ष से ई पूरा साफ हो गईल बा कि–

'ई ढोल बाज रहल जे विकास कह–कह के
नियत बा, हमके हटा के तू सब नीलम कर
ऊ हमार गाँव बना के मसान तक कहलन
ए मरेवाला कहाँ बाड़! एकर दान कर'

(पीड़ित (कवि के सद्य प्रकाशित किताब : 'सुर में सब सुर' से)

एह तरह से दलित–विमर्श के दलित–सशक्तिकरण में गते–गते सुभाविक रूप से बदलाव हो रहल बा आ एह बदलाव का दिसाईयुवा कवि प्रकाश उदय के ई व्यंग बहुते सटीक आ निरुत्तर करे लायक बा–'हमरा एगो आँख से राउर हतना त रउरा दुनों आँख से हमार कतना बिगड़ जाई जतरा? ईहो बता दिन ना पंडी जी, पलटीं ना पतरा!'

(आभार : इस्पतिका : 2011)

आजादी पउलस के?

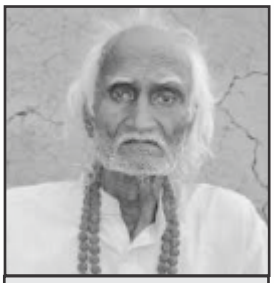

रामजियावन दास 'बावला'

देश भयल आजाद मगर
रण के बराबरी पउलस के ?
सोचा, आजादी पउलस के ?

के– के आपन खून बहावल
के आपन सर्वस्य लुटावल
केकरे लड़िका बने कलक्टर,
ई ओस्तादी पउलस के ?
सोचा, आजादी पउलस के ?

केकरे बदे किरिन मुस्काइल
धरती केकरे नाम लिखाइल
के तरुनी संग मउज उड़ावै,
बुढ़िया दादी पउलस के ?
सोचा, आजादी पउलस के ?

केकरे आह से पर्वत टूटल
शिव–ब्रह्म क आसन छूटल
के जोगी बन अलख जगवलस,
पर परसादी पउलस के?
सोचा, आजादी पउलस के ?

शक्ति दीन कै अबहीं बाय
जवने से सुरपति डर खाय
लोहे क बिटिया के ब्याहल,
मगर दामादी पउलस के
सोचा, आजादी पउलस के ?

तूरीं ई जंजीर

रामचन्द्र 'राही'

कब तक अन्हार रहीऽ,
बहि अखियन से नीर।
आईं मिल केऽ तूरीं ई जंजीर।

जात अउरी पांत, अब ना बँटवाई।
दास्तां के पाठ रउआ
ग्रन्थ से हटाई ।
ऊँच अउरी नीच केऽ
मिटाई लकीर ।।
आईं मिल केऽ तूरीं ई जंजीर।

छूत–अछूत केऽ
दिवार के मिटा दीं
कंधा के कंधा, मिला के दिखला दीं।
तबहीं अधिकार मिली,
बदलीं तकदीर।
आईं मिल केऽ तूरीं ई जंजीर।

जोर जुलुम रउआ,
मिल के दफनाई
शोषण से मुक्ति ला, एकता बनाई
राजा न रंक केहू, रहिहें फकीर
आईं मिल केऽ तूरीं ई जंजीर।

जन जन में क्रांति केऽ,
दिया जला दीं
घरवा के लछिमी के, कैद से छुड़ा दीं
दानव दहेज मिल केऽ, लुटे ना चीर
आईं मिल केऽ तूरीं ई जंजीर।

अन्धविश्वासी, भूतवा केऽ भगाईं
करिया इतिहास केऽ, पन्ना जलाईं
समरस समाज लाईं, बन केऽ कबीर
आईं मिल केऽ तूरीं ई जंजीर।

■■■

भोजपुरी कविता

छोट

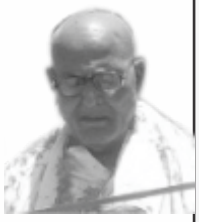

महंत रामरूप गोस्वामी जी

बरगद, पीपर बड़हन गाछी, बाकि बीज बड़ी छोट।
माछी लात सम्हार ना होला, जइसे मुगदड़ चोट।।
प्रान देह के छोड़ गइल, मुअल कहे सब कोई ।
तनिका में छाता में मुअलें, तनिका बुझे ना कोई ।।

पहुँच गइला पर सजि बुझबऽ, पाहिले कुछऊ नाहीं ।
बूंद में समुनदर ढूकल लहर में दरिया जाही।।
तनिका देख के हहरऽ नाहीं, तनिके में संसार ।
एक बूंद का कारने, बसल सजी संसार ।।

नाम बड़ा ना काम बड़ा ह, चाहे थोरका लउके ।
छोटका सींचे गाछ के, बाड़का खाली फंउके ।।
अगम जानि के रहिया पकडे, अइसन कमें संत ।
भारी बुझ भरम के भटके, ओइसन जीव अनंत ।।

भरम में भटकि उमिर गंवावे, जानेना आतम ज्ञान ।
विरले संत भाव सागर उतरे, धई के तनिका ध्यान ।।
छुअला पर हाथे कटी जाला, छोट छूडी के धार ।
ध्यान कर गुरुदेव के, तरी जइबऽ भावपर।।

■■■

भोजपुरी गजल

आसिफ रोहतास्वी

घुमलीं जंगल, वादी–वादी
भूखे बा सउँसे आबादी

मुँह पर ताला, पाँवे बेंड़ी
धन बा ! धन बा ! ई आजादी

हक खातिर हथियार उठवलसु
नांव धराइल नक्सलवादी

जे अबरा, बेईमान कहाला
दूध क धोअल खाकी–खादी

गडथइया के नाच नचावे
खुबसूरत सत्ता सहजादी

सुते वाला ! जागल रहल
आज गजल बन गईल मुनादी

पखत पवते छप से काटी
'आसिफ' कइसे मुड़ी नवा दी

■■■

दलित काव्य परम्परा के 100 साल आउर 'हीरा डोम' के कविता

योगेश सिंह

आधुनिकता के जब शुरूआत भइल रहे, तब कुछ नया अवधारणा – सूत्र उभरल रहे – जइसे – इतिहास, समाज आ व्यक्ति। कुछ ऐही तरे पिछला कुछ वर्ष से नया वैचारिक विमर्श उभरल बा। – स्त्री, दलित और आदिवासी। सब प्रांत में बहुत पहले से ही कवनो न कवनो रूप में स्त्री, दलित आऊर आदिवासी अस्मिता के देखल जा सकेला, लेकिन चेतना आऊर चिन्तन के देखल जाव तऽ इ सब विमर्श के उभरल हाल के घटना हऽ। आजकल ई अपना चरम सीमा पर बा।

कहल तऽ जाला की दलित साहित्य का प्रारंभ मराठी साहित्य मे सबसे पहले भइल। इ प्रश्न पर बाद में विचार कइल जाई, पहले दलित के हऽ? एहपर विचार कऽ लेहल जाव –

दलित का तात्पर्य समाज के ऊ पद दलित वर्ग से हऽ, जेकरा के सदियन से अछूत कहकर अपेक्षित कइल गइल बा। हर प्रकार से ओकर शोषण कइल गइल, वो लोग के कवनों अधिकार न देहल गइल, शिक्षा स वंचित कइल गइल, आऊर इच्छा शक्ति के पनपे न देहल गईल।

आजकल जेतना भी नया लेखक दलित के चर्चा कर रहल बाऽ लोग, अइसन लागऽ ता कि उ लोग अपना लेखनी के बहती गंगा में हाथ धोत बाड़न। काहे कि सब केहू दलित विमर्श के एगो अइसन 'पिहारा' समझ लेहल बा जेकरा में हाल डाल के कुछु निकाल लऽ। भले कवनो दलित के एह से ठेस पहुँचे न पहुँचे एकरा से केहू के मतलब नइखे।

आज 2014 में दलित काव्य परम्परा के 100 साल पूरा भइल बा। जइसन कि हम उपर चर्चा कइनी हऽ कि कहल जाला कि दलित साहित्य का प्रारंभ मराठी साहित्य से भइल। लेकिन जे लोग भी इ कहेला, उ लोग शायद हीरा डोम के भूला गईल बा, जिनकर दलित चेतना से युक्त कविता 1914 में 'सरस्वती– पत्रिका में संपादित भइल रहे, सरस्वती पत्रिका के संपादन ओह समय 'महावीर प्रसाद द्विवेदी जी' करत रहनी। सरस्वती पत्रिका में आपन रचना के स्थान दिआवल, आसान काम न रहे, काहे कि निराल जी के कविता के महावीर प्रसाद द्विवेदी जी छापला से मना कर दिहले रहीं। ओ समय 'हीरा डोम' की कविता सरस्वती पत्रिका में आइल दुख, दर्द, पीड़ा आउर त्रासदी से भरल कविता के कुछ पंक्ति देखल जाव –

हमनी के इनरा के निगिचे न जाइलें जा
पाँके में से भरि भरि पिअतानी पानी
पनहीं से पिटि पिटि हाथ गोड़े तूरि दैले
हमनी के एतनी काहे के हलकानी?

ई सवाल हीरा डोम 1914 में ही पुछलें रहलें, आ इहें काव्य से होते हुए भोजपुरी दलित चेतना के विकास भइल। एकरा के मराठी साहित्य से जोड़ के देखला के जरूरत बा। ई कविता में जवन 'इनार' बा कहीं इ उहे इनार त न हऽ जेकरा के प्रेमचन्द 'ठाकुर के कुआँ' मे देखवले बाड़े। 'ठाकुर का कुआँ' एक छोटे कहानी हऽ। प्रत्यक्षतः दुगो पात्र बाड़न – जोखू और गंगी स्वच्छ पानी पीये के चाह आउर ओकरा के उपलब्ध करावें के समस्या हीरा डोम के कविता के स्वर लागता। गंगी हिन्दु समाज के घातक नेम–निमय पर करारा चोट करेली – हम क्यों नीच हैं और ये लोग क्यों ऊँच ? इसलिए कि ये लोग गले में तागा डालते हैं? यहाँ तो जितने हैं, एक से एक छँटे हैं। चोरी ये करें, जाला–फरेब ये करें, झूठे मुकद्दमें ये करें, ये सब प्रश्न के हीरा डोम अपना कविता में उठा चूकल रहलन 1914 में ही।

जति धर्म शोषण के निकृष्टतम रूप हऽ। इहें कारण बा कि मेहनत करेवाला के नीच कहल जालाा, आऊर भेड़ चुरावेवाला, अपने घर में जुआ खेले वाला, भा घी में तेल मिलावे वाला ऊँच हऽ।

एक दलित कवि के एगो कविता याद आवेला –

गाँव के किनारे
मेरा घर,
और मेरे भीतर
तुम्हारा डर ही डर,
न जाने कब?
तुम बुलावा भिजवा दोगे,
शहर से आए मेरे बेटे की
नई कमीज उतरवा दोगे।
(न जाने कब – महेन्द्र बेनीपाल)

भोजपुरी लोक गीतों में न जाने केतना, दलित से संबंधित गीत होई, जेकरा के प्रकाश में ले आवे के जरूरत बा। कुछ गौण कवि बाड़े उनकरा के भी प्रकाश में ले आवे के जरूरत बा। ई समाज में सब कोई अपना के श्रेष्ठ धर्म के बतावला में लागल बा, सब केहुँ अपना के ऊँच जाति में स्थान देवे के चाहेला, जैसा कि हजारी प्रसाद द्विवेदी

थक गए बादल कविता

अनुपमा सरकार

थक गए बादल भी उड़ते उड़ते
पिघल पिघल धरती पर आ रहे हैं
पानी के झीने से परदे की ओट में
शर्म से अपना मुंह छुपा रहे हैं।

कब से उमड़ घुमड़ रहे थे नभ में
चमक दामिनी की दिखलाते
कभी गरजते कभी सरकते
दिनकर पर आधिपत्य जताते।

पर आखिर तो हैं बादल ही
थल के जल का रूप अनोखा
आना होगा धरती पे वापिस
उड़ लें चाहे बन खटोला।

और धरा तो है ही स्नेहिल
मां के जैसी प्रेम में विह्वल।

टपक टपक गिरती बुलबुलियों पे ही
अपनी ममता लुटा रही है।
अंक में भर के बदली के बच्चे
नयी सरगम गा रही है।

सच प्रकृति की ये मदमस्त अदा
मेरे मन को लुभा रही है!

■■■

कहेनी – 'अपने यहाँ हर छोटी से छोटी जाति भी, अपने नीचे एक और छोटी जाति ढूँढ़ लेते हैं।' आखिर हम कहऽतानी का जरूरत बा ऐकर? जाति धर्म से तनी उपर उठके अपना आप के पहचानला के जरूरत बा। हमार एगो कविता के चार लाइन बा –

जात–पात के कड़ाही में पकावल गइली हरदम
केहू न खइलक भईया, खूदे खइनी आपन गम।।

अब त सुलझता धीरे–धीरे रोटी के सवाल
पर काहें बेटी के शादी पर अबहूँ होत बा बवाल?

मत होखी हमरा पर रउवा ऐतना बेरहम
केहू न खइलक भईया, खूदे खइनी आपन गम।।

आजकल बहुत परिवर्तन होखत बा लागन के मानसिकता में। रोटी के स्तर से लोग थोड़ा उपर उठ गइल बा, इ जात धर्म से। लेकिन बेटी के स्तर पर लोग अबो ऊहे मानसिकता ले के बइठल बा। शादी बियाह में लोग अबहूँ ई जात धर्म के घेरा मे बंद बा। थोड़ा बदलाव के जरूरत बा। उम्मीद कर तानी की आवे वाला समय मे परिवर्तन होखी और भोजपुरी साहित्य भी आगे बढ़ी और दलित साहित्य के जब भी चर्चा होखी हीरा डोम के आगे रखकर विचार कइला के जरूरत बा।

(लेखक भोजपुरी रंगमंच के संगे जुड़ल बानी।)

■■■

– भोजपुरी –

एन्थोनी दीपक

माथ के ई चनन हऽ, रोली हऽ,
भोजपुरी हमन के बोली हऽ,
इहे गहना ह गाँव–गँवई के,
हिन्दी दामन हवे, ई चोली हऽ।
एहमें बाटे मिठास लोरी के
फाग–मस्ती बा एहमें होरी के,
गंध जाँगर के, गमक माटी के
तान गुजरी के एहमें गोरी के,
हर छबर–डगर बहार चल
छेड़ दिल के अपन सितार चल
देखऽ कइसन बहार आइल बा
अपना बोली के तूँ सँवार चलऽ
रोज अइसन बहार ना आई
रोज अइसन सुतार ना आई
जब ले भोजपुरी ना जनब तूँ
तब ले दिल के करार ना आई।

■■■

हीरा डोम : दलित साहित्य में मील के पत्थर

नवल किशोर सिंह 'निशान्त'

अनुकूल वातावरण आ पोषण पाके गाछ के फरल–फूलाइल कवनों अचंभा के बात नइखे। प्रतिकूल परिस्थिति में रह के, आँधी तूफान के मार सहत जवन गाछ–बिरीछ फर–फूला जाए तऽ अचरजो का अचरज हो सकेला। इ बात खाली गाछे–बिरीछ ना बलूक साहित्य आ साहित्यकारो पर आजमावल जा सकेला। पढ़त–लिखल आ सुविधा सम्पन्न समुदाय से ताल्लुक रखेवाला साहित्यकारन से इतर एह धरती पर अनपढ़ गंवार आ दलित शोषित परिवार से संबंधित साहित्यकार जनमलन बाड़न जेकरा हुनर पर आसमानों का झुक जाए के पड़ल। अइसन साहित्यकारन का सूची में हीरा डोम के नाम शुमार बा। कवनो भी साहित्यकार के मूल्यांकन के एगो लमहर आधार इ बा कि उनकर रचना समाज के केतना आगे ले गइल कि पाछा ढकेललस।

ऊपर लिखल पैमाना का आधार पर विश्लेषण कइल जाए तऽ हीरा डोम के 'अछूत की शिकायत' नाम के कविता सन् 1914 में 'सरवती' नामक जानल मानल पत्रिका में छप चुकल बा। जवना समय में दलित लोगन क जिनगी जानवर से बदतर रहे तऽ दलित साहित्य के कल्पने कइल बेमानी बा। ओही असंभव कल्पना का बीच से हीरा डोम क 'अछूत के शिकायत' कविता शोषण आ पीड़ा का बदरी के चीरत–फाड़त, चमकत चनरमा नियर सामने आइल। 'अछूत की शिकायत' कविता शोषण आ पीड़ा के पराकाष्ठा बा। सबसे लमहर बात तऽ इ बा कि ओह समय में अइसन रचना कइल जान से खेलला का बराबर रहे। कवि का दिल में इ डर ना रहल कि एकरा प्रतिक्रिया में उनका संगे का–का हो सकेला। कवि निडर होके अपना मन के उदगार व्यक्त कइले बाड़े। 'अछूत के शिकायत' कविता दलित साहित्य में दुर्लभ दस्तावेज बा। कवि के कविता दलित साहित्य खातिर मील के पत्थर बा। आगामी पीढ़ी खातिर टिमटिमात ढ़िबरी ना बलूक एगो ऊँचाई पर टंगल फ्लोरासेंट लैम्प जइसन बा। हीरा डोम के समय आ परिस्थिति के अंदाजा एगो हिन्दी कवि का पांति से लगावल जा सकत बा –

दिन हुआ पोटैशियम, रात हुआ सोडियम,
फिर भी गीत लिखतै हैं हम।।

ऊपर का पांति से कवि का दरद आ पीड़ा के भलीभांति समझल जा सकत बा। जइसे कवनों सुखद कविता हिरदा में लबालब भरल आनन्द के अतिरेक के अभिव्यक्ति हऽ ओइसही दुखद कविता हिरदा के छेदत–बेधत पीड़ा के अतिरेक के निष्कासन। 'अछूत की शिकायत' कविता के शब्दन में व्यक्त पीड़ा के वर्णन कल्पनातीत बा। ओह समय के लाचारी आ बेबसी झेलले तऽ बहुत लोग होई बाकिर हीरा डोम के पीड़ा खाली उनकर व्यक्तिगत पीड़ा ना होके सार्वजनिक पीड़ा के प्रतीक बन गइल।

असली कवि भा साहित्यकार उहे ह जे खुद पीड़ा सहके समाज के ओ पीड़ा से उबारे के रास्ता तलाश सके। कवि लोग आसानी से समझ सकेला कि कवनो पीड़ा के काव्य में व्यक्त करे खातिर उनका फेन से ओही पीड़ा से गुजरे के पडेला। उनकर दशा ओ समय अइसन रोगी जइसन होला जे इंजेक्शन के दरद सहला का बावजूदो फेरू इंजेक्शन लगावावे खातिर मजबूर होला। हीरा डोम 'अछूत की शिकायत' कविता सोना–चानी का कलम से लिखेवाला कलमगार ना रहन। ऊ तऽ संघर्ष आ जलालत का कलम से हियरा का कागद पर दाद के दरियाव उतार दिहलन जवना में सात जनम तक नहइला का बादो अत्याचारी लोगन के पाप ना धोवा सकी। हं, जब–जब समाज उनका कविता के पढ़ी शोषक का गाल पर तमाचा जइसन अनुभव होत रही। ऊ जनम–जनम तक गाल सहलावे खातिर बिवश रहीहें। हीरा डोम के इ कविता शोषण का खिलाफ एगो चिंगारी बा जवन समय–समय पर तपन महसूस करावत रही।

वर्तमान संदर्भ में विचारणीय बात तऽ इ बा कि हीरा डोम के कविता आज भी अप्रासंगिक नइखे। जवन अत्याचार अन्याय अतीत में दलितन पर होत रहे, ऊ कवनों ना कवनों रूप में आजो विद्यमान बा। भले ओकर तरीका बदल गइल होखे। एह संदर्भ में हमरा एगो घटना के वर्णन कइल जरूरी बुझाता। एगो शिक्षण संस्था में प्रधानाचार्य का सामने का देवाल पर संविधान निर्माता बाबा साहब के तस्वीर टांगल मजबूरी रहे। काहे कि उनका कार्यालय में महापुरुष लोगन के तस्वीर लगावल संस्था खातिर आर्थिक

रूप से फायदामंद रहे। उनका संस्था के विदेशी एन. जी. ओ. से दलित कल्याण का नाम पर मोटा रकम हासिल होत रहे। हमरा अचरज तब भइल जब हम वो बराहमन प्रधानाचार्य का मुँह से कवनो सुपरिचित सजातीय आदमी से इ कहत सुननी –'क्या कहा जाए महाशय, जब–जब मैं दीवार पर अपने सामने इस चमार–चुहार की तस्वीर देखता हूँ मेरा खुन खौलने लगता है। इसी कारण आज चमार–चुहार हर जगह कुर्सी हथिया लिए हैं। जब मैं कार्यालय छोड़ता हूँ तस्वीर पर थप्पड़ मार कर बाहर निकलता हूँ। मजबूरी है तस्वीर हटा दूँ तो एन. जी. ओ. से फंड मिलना बंद हा जाएगा।'

अब अपने सभे विचार करीं कि दलित सम्मान का नाम पर मलाई खाये खातिर अभिनय आ औपचारिकता ही पूरा हो रहल बा। मतलब आज भी ऊ शोषण कवनो ना कवनो रूप में जारी बा। दलित का कवनो सुविधा मिल रहल बा तऽ बस संवैधानिक बाध्यता का वजह से। अगर आज भी संवैधानिक बाध्यता ना होखे तऽ दलित शोषित के पूछ निहार ना मिली। एकरा हिसाब से हीरा डोम के 'अछूत की शिकायत' कविता पहिले से अधिका अब प्रासंगिक बा। जवन आग हीरा डोम जरवले बनी ओकरे के बुतावे के नइखे। बलूक ओह आग के मशाल बनाके सुतल जन के जगावे में प्रयोग करे के बा। एगो बात विचारणीय बा कि जवन काम बम–बारूद ना कर सके ऊ कविता साधारण होइवे ना सकेला। ओइसन असाधारण कवि का कर्म के आगामी पीढ़ी के जी–जान से जमीन से आसमान तक चहुंपावे खातिर दम लगावे के पड़ी। इतिहास लिखे में पक्षपात भइल बा एह बात से इनकार नइखे कइल जा सकत।

अब समय आ चुकल बा जब हीरा डोम जइसन निर्भीक कवि का रचना से सबक लेके इतिहास के पुर्नलेखन होखे। एकरा दल में दलित–शोषित इतिहासकार लोग के शामिल कइल जाव। हीरा डोम, रसूल मियां, आ आउर भी दलित साहित्यकारन के भूलल बिसरल रचनन के समेटल जाव। दलित शोषित समाज के युवा लेखक कवि लोग का सामने आके अतीत का रथ पर वर्तमान के बइठा के भविष्य का सफर पर निकल पड़ो तबे दलित साहित्य आ साहित्यकारन के पहचान बन सकी।

आखिर मे हीरा डोम के रचना 'अछूत की शिकायत' का माध्यम से हम कहल चाहत बानी कि ना खाली दलित लेखक बलूक दलित लेखिका, कवयित्री लोगन के भी खोज–खाज के ले आवे के चाहीं। काहे कि दलित साहित्य में महिला लेखिका भी संजीवनी जइसन काम करीहन जवना से मूर्छित भइल दलित साहित्य पुर्नजीवित हो सके।

■■■

दस्तावेज

जय! मजदूर- किसान के।

रमेश चन्द्र झा

बहुत भइल पूजा दौलत के, जुग आइल इन्सान के
जय–जयकार मचल बा जग में,
अब मजदूर–किसान के।
ऊ मजदूर–किसान कि जेकरा श्रम से सब में जान बा
लालन–पालन करे सभन के जे ऊ बहुत महान बा,
बाँहन में फौलाद जड़ल बा, सीना में चट्टान बा
तर–तर चुअत पसेना में हीरा– मोती के खान बा,
डेग–डेग पर सामना जे? आँधी –तूफान के
जय – जयकार मचल बा जग में,
अब मजदूर–किसान के।
जेकरा श्रम से साँझा सुहावन, मनभावन ई प्रात बा
जेकरा श्रम से रौनक बा धरतीवासी के गात पर
श्रमिक बन्धु के नमन करीं हम, दिल से, एतने बात बा,
धरम–करम के बात इहे बा, इहे दीन–ईमान के
जय–जयकार मचल बा जग में,
अब मजदूर–किसान के।
जेकरा श्रम से हँसी–खुशी, दुनियाँ में ईद – दिवाली बा
करखाना में चहल–पहल बा, खेतन में हरियाली बा,
ओकरा तन पर भी कपड़ा, सिर पर छाया भरपूर रही
जेकरा मेहनत से घर–घर में मौज–मजा–खुशहाली बा,
कबो श्रमिक मुंह ताज रही ना चाऊर–दाल–पिसान के,
जय–जयकार मचल बा जग में,
अब मजदूर–किसान के।
सब के मुँह पर आज श्रमिक के महिमा बा, जयगीत बा
दसो–दिसा में गूँज रहल श्रम के पूजा – संगीत बा
लहर–लहर बा नाच रहल सागर के एह संदेस से –
'दुनिया के सब मेहनतकस से मेहनत कस के प्रीत बा'
आदर में बा सिर झुकल हर बच्चा, बूढ़ जवान के
जय–जयकार मचल बा जग में,
अब मजदूर –किसान के।

■■■

दलित साहित्य का सौन्दर्य-बोध और भिखारी ठाकुर

कंवल भारती

हीरा डोम और भिखारी ठाकुर दोनों ही बिहार से थे और दलित वर्ग से आते थे। दोनों ही भोजपुरी के कवि थे और समकालीन भी। 1914 में जब हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' 'सरस्वती' में छपी थी, तो भिखारी ठाकुर उस समय 27 साल के थे। 'सरस्वती' में हीरा डोम की कविता के छपने का अर्थ था कि वह चर्चित कवि थे, क्योंकि 'सरस्वती' में वह कविता हीरा डोम के किसी प्रशंसक द्वारा भेजी गयी थी और महावीर प्रसाद द्विवेदी पर उसे छापने का सामाजिक दबाव भी जरूर रहा होगा। इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि भिखारी ठाकुर हीरा डोम को न जानते हों। लेकिन मेरे सामने विचारणीय सवाल यह है कि हीरा डोम की जिस क्रान्तिकारी चेतना ने दलित साहित्य के सौन्दर्यशास्त्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी, वैसी कोई भूमिका भिखारी ठाकुर का विपुल लोक साहित्य भी नहीं निभा सका। निस्सन्देह भिखारी ठाकुर कला–साहित्य की एक पूरी संस्था थे। वह कवि, गायक, रंगकर्मी और कलाकार के साथ–साथ नाटककार भी थे। उन्होंने लगभग 29 लोककाव्य–नाटकों की रचना की, जो लोक में प्रतिरोध की महत्वपूर्ण दस्तक हैं।

किन्तु जिस परिवर्तनवादी सौन्दर्य–चेतना उनसे अपेक्षा थी, वह उनके लोकनाटकों में अनुपस्थित है। भिखारी ठाकुर ने अपने नाटकों में वर्ण और जाति के सामन्ती ढाँचे पर कोई प्रहार नहीं किया है, वरन् वे उन समस्याओं को उठाते हैं, जो पिछड़े समाज में अपनी बेटियों को बेचने, विधवा स्त्रियों की उपेक्षा, नशाखोरी, जुआ, व्यभिचार, जिसे वे कलियुग–प्रेम कहते हैं, वृद्धों की बेकद्री और रोजगार के लिये गरीबों का गाँव से पलायन की समस्यायें थीं। वे कहीं भी वर्णव्यवस्था और जाति की समस्या पर प्रहार नहीं करते, ब्राह्मणवाद पर भी चोट नहीं करते और न सामन्तवादी दमन के खिलाफ आवाज उठाते हैं। यद्यपि, उनके नाटक इस आधार पर अवश्य ही लोक साहित्य में प्रतिरोध की भूमिका निभाते हैं कि पौराणिक नाटकों के उस युग में उन्होंने यथार्थवादी नाटकों का सृजन और मंचन किया, पर वे अपने नाटकों में उन समस्याओं के लिये उत्तरदायी

धर्म–व्यवस्था पर कोई सवाल खड़ा नहीं करते हैं, जबकि दलित कवि हीरा डोम की एक मात्र उपलब्ध कविता 'अछूत की शिकायत' न केवल वर्णव्यवस्था, बल्कि ईश्वर की भी पूरी सत्ता को कटघरे में खड़ा कर देती है।

क्या कारण है कि शोषित वर्ग से आने वाले इन दोनों कवियों की सौन्दर्य चेतना अलग–अलग है? क्यों भिखारी ठाकुर अपने समय के सामाजिक परिवर्तनवादी आन्दोलन से भी परिचित दिखाई नहीं देते हैं? क्या इसका कारण यह माना जाय कि सामाजिक स्तर पर अस्पृश्यता के जिस अलगाववादी वातावरण में अछूत जातियाँ रह रही थीं, पिछड़ी जातियाँ उससे मुक्त थीं? अस्पृश्यता से मुक्ति की आकांक्षा ने ही हीरा डोम समेत उस दौर के सभी अस्पृश्य कवियों को वर्णव्यवस्था का विद्रोही बनाया, और इसीलिये उनका साहित्य समतावादी समाज के निर्माण का घोषणा–पत्र है। लेकिन यह आश्चर्यजनक ही है कि भिखारी ठाकुर अपने समय के दलित नवजागरण के उस आन्दोलन से, जो वर्णव्यवस्था के विरोध में था, कैसे बेखबर रहे, जबकि उसमें पिछड़ा वर्ग भी उतना ही सक्रिय था, जितना कि

अस्पृश्य वर्ग था?

बताया जाता है कि भिखारी ठाकुर पर बंगाल के नवजागरण का प्रभाव पड़ा था। 'भिखारी ठाकुर रचनावली' के सम्पादक नागेन्द्र प्रसाद सिंह अपने सम्पादकीय में लिखते हैं–'भिखारी ठाकुर बंगाल के पुनर्जागरण आन्दोलन से प्रभावित होकर जब अपने गाँव कुतुबपुर (सारण) लौटे, तो उन्होंने अपने समाज और उसकी विविध सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं को बड़ी सूक्ष्मता तथा सम्वेदनशीलता से देखा। पहले से चल रहे किसी आन्दोलन की धारा में सम्मिलित हो विलीन हो जाने के बदले उन्होंने अपनी शैक्षिक क्षमता, जातीय स्थिति और अन्तर्निहित वैयक्तिक विशेषताओं पर चिन्तन किया तथा सकारात्मक ढंग से पुनर्जागरण को लोकनाटक, लोकभजन, गीत, कविता और 'तमासा' के माध्यम से भोजपुरिया समाज में पहुँचाने का निर्णय लिया।' लेकिन जब वह आगे लिखते हैं कि उस काल–खण्ड में भोजपुरी क्षेत्र के सामन्तों और जमींदारों ने भी भिखारी ठाकुर को सम्मान, संरक्षण और सहयोग प्रदान किया, तो साफ हो जाता है कि भिखारी ठाकुर का नाट्य–लेखन और रंग–कर्म समाज के मूल ढांचे को नहीं तोड़ रहा था, इसलिये सामन्तवाद–विरोधी नहीं था।

बेहतर होगा यदि हम भिखारी ठाकुर के सौन्दर्य–बोध को उनके नाटकों से ही समझें। उनका एक नाटक है 'बिरहा–बहार', जिसमें 'धोबी–नाच' और धोबी–कर्म की महिमा गायी गयी है। इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने धोबी और धोबिन के मुख से जिस तरह ब्राह्मणवाद और देवी–देवताओं में अन्धविश्वास का प्रचार कराया है, उससे साफ हो जाता है कि वह सामन्तों के लिये कितने जरूरी कवि थे। नाटक आरम्भ होने से पहले सूत्रधार की कुछ पंक्तियों में हलके प्रतिरोध की एक झलक भी हमें मिलती है, पर वे पंक्तियां भिखारी ठाकुर की नहीं हैं, बिहारी कवि की हैं। वे पंक्तियां इस प्रकार हैं–

सिन्धु की कुमारी, देख दीनता हमारी, वर्षा वो धूप, जाड़ा, तीनों सहना पड़ा।

जोहना पड़ा आनन्दहिं दिमागदार लोगन को, अधम अबुधन को बोल सहना पड़ा।

कहे 'बिहारी' कवि, लक्ष्मी तुम्हारी हेतु, भारी–भारी चूतियन को चतुर कहना पड़ा।

(भिखारी ठाकुर रचनावली, पृष्ठ 180)

इसके बाद अनेक देवी–देवताओं की आरती करते हुए धोबी और धोबिन नाचते हैं और एक–दूसरे से सम्वाद करते हैं। कुछ सम्वाद यहाँ द्रष्टव्य हैं–

धोबी– चलती बहुत बा तोहार मइया डांकनी, कि विद्या से बानी कमजोर।

कहे 'भिखारी' लाजे मरत बानी, नईया भइल चहूँ ओर।।

धोबिन– आमी के अम्बिका–भवानी के मनावत बानी, जहाँ बहे गंगा के धार।

कहे भिखारी दया करिके देवी, भव–जाल से करहू हमें पार।।

धोबी– साधू पंडित के चरनन में, सदा रहऽ लवलीन।

कहे 'भिखारी' तूं सेखी देखइबू, हो जइबू कउड़ी के तीन।।

धोबिन– चार वेद जिनका मुख में, चरनन में चारों धाम।

कहे 'भिखारी' ब्राह्मण–पद के, सुमिरऽ आठों जाम।।

(वही, पृष्ठ 180–81)

धोबी और धोबिन के बीच यह सम्वाद लम्बा चलता है। आगे इसी सम्वाद में धोबी–शिव की शरण जाने, धोबिन–उमा उमा और फिर आगे राम राम, सीताराम, राधे रमन और कृष्ण–कृष्ण कहने में ही दानों प्राणी सकल पापों से मुक्ति मानते हैं। यहाँ भिखारी ठाकुर ब्राह्मणवाद में अपनी पूरी आस्था व्यक्त करते हुए ब्राह्मण के चरणों की वन्दना करने में ही चारों वेदों को पढ़ने और चारों धामों की यात्रा करने का पुण्य मानते हैं। ब्राह्मणवाद के प्रति जिस लोककवि का यह सौन्दर्यबोध हो, उसका विरोध ब्राह्मण और सामन्त क्यों करेंगे?

आगे चलकर इसी सम्वाद में वर्णकर्म का समर्थन और धोबी के जातीय पेशे का आध्यात्मीकरण भी मिलता है। धोबिन कहती है–

जातिक के काम सब केहु छोड़ देतु बाटे, छोड़ऽ दऽ धोअलाका के नेम।

सेत छोड़ी के खेती करऽ, बोअऽ, तरकारी, फर हाट में बेचबऽ साग–सेम।।

(वही, पृष्ठ 182)

इस नाटक का रचना–काल 1924 का है। यह भारत में दलित आन्दोलन के चरम उत्कर्ष का दौर था। स्वतन्त्रता, समानता और स्वाभिमान की इस लड़ाई में अछूत जातियां सभी राज्यों में अपने पारम्परिक गन्दे पेशों का परित्याग कर रहीं थीं। भिखारी ठाकुर ने इसी के विरोध में इस नाटक की रचना की थी। धोबिन कहती है, सब लोग जाति के पेशे छोड़ रहे हैं। क्या हम भी अपने धोबन का काम छोड़ दें? परम्परा छोड़कर खेती करें और तरकारी बोकर हाट में जाकर बेचें? धोबी जवाब देता है– कोइरी

(सब्जी उगाने वाली जाति) साग को धोता है, तमोली पान को धोता है और पुरोहित कथा का ज्ञान बांच कर जजमान के मन को धोता है। यथा–

कोइरी धोअत साग के, धोवत तमोली पान।
जजमानिका के पुरोहित धोवत, कर्मकाण्ड कथी ज्ञान।। (वही)

धोबी के इन शब्दों से भिखारी ठाकुर सन्देश दे रहे थे कि धोबी का पेशा गन्दा नहीं है, क्योंकि सभी लोग धोने का काम करते हैं। अछूत जातियों को हिन्दू गांवों में सिर पर साफा, हाथ में घड़ी और नया कपड़ा पहनने की इजाजत नहीं थी। वे घुटनों से नीचे चुन्नट वाली धोती भी नहीं पहन सकते थे। इसका उल्लंघन अपराध माना जाता था। इस पर भिखारी ठाकुर एक हल्का सा विरोध धोबी से कराते हैं। वह कहता है–

मथवा में बवड़िया जोड़िया, हथवा बान्हल घड़िया,
अगवा लटकल बाटे धोतिया के चून।
हमहू पहिरबऽ नया कपड़ा, देख लीह बिहान से।
कहे 'भिखारी' नेह लगाव, सीताराम भगवान से।।
(वही)

जिस तरह तुलसीदास ने कलियुग को अधर्म का युग कहा है और जिस तरह सारे हिन्दू धर्मगुरु भ्रष्टयुग के रूप में कलियुग की निन्दा करते हैं, उसी तरह के विचार भिखारी ठाकुर के भी थे। वे भी कलियुग को अधर्म का युग मानते थे, जिसमें सारी नैतिक मर्यादायें टूट जाती हैं, लोग शराबी, व्यभिचारी, हर तरह का पाप करने वाले, नास्तिक और अधर्मी हो जाते हैं, इत्यादि।

धोबी धोबिन से कह रहा है कि देख लेना, वह कल से हाथ में घड़ी भी बांधेगा, नया कपड़ा भी पहनेगा और घुटनों के नीचे चुन्नट वाली धोती भी। अवश्य ही अछूत जातियां स्वाभिमान के साथ जीने का साहस कर रहीं थीं, पर भिखारी ठाकुर यहाँ धोबी को सीताराम भगवान से नेह लगाने की भी सीख दे रहे हैं, जिसका अर्थ है, ब्राह्मणों और सामन्तों के प्रति भक्ति–भाव बनाये रखना, अर्थात् उनकी व्यवस्था को बनाये रखना। भिखारी ठाकुर की यह सामन्तवादी सौन्दर्य–चेतना समकालीन दलित आन्दोलन के लिये कितनी घातक थी?

भिखारी ठाकुर का एक नाटक है 'गंगा–स्नान', जिसमें वह उस हिन्दू स्त्री के आदर्श को प्रतिष्ठित करते हैं, जिसके लिये पति–सेवा ही स्त्री–धर्म है। इस नाटक का रचना–काल 1934 का है। इस नाटक में, नागेन्द्र प्रसाद सिंह के अनुसार, 1934 में आयी गंगा की बाढ़ का संकेत मिलता है। (वही, पृष्ठ 132) नाटक के आरम्भ में ही एक सखी दूसरी सखी से कहती है–

हम ना जाइब गंगा का तीर। घर हीं बाड़न श्री रघुबीर।।
पतिब्रत छाड़ि धर्म नहीं दूजा। करब न और देव के पूजा।।
(वही, पृष्ठ 133)

जिस तरह तुलसीदास ने कलियुग को अधर्म का युग कहा है और जिस तरह सारे हिन्दू धर्मगुरु भ्रष्टयुग के रूप में कलियुग की निन्दा करते हैं, उसी तरह के विचार भिखारी ठाकुर के भी थे। वे भी कलियुग को अधर्म का युग मानते थे, जिसमें सारी नैतिक मर्यादायें टूट जाती हैं, लोग शराबी, व्यभिचारी, हर तरह का पाप करने वाले, नास्तिक और अधर्मी हो जाते हैं, इत्यादि। इसी कलियुग–प्रेम पर उन्होंने एक नाटक लिखा था, जिसका शीर्षक है–'पियवा निसइल', यानी शराबी पति। शराबी भी ऐसा–वैसा नहीं, बल्कि चौबीसो घण्टे नशे में रहने वाला। नशे के लिये वह अपना सब–कुछ बेच देता है, खेत–जमीन, घर का सामान, यहाँ तक कि घर की चौखट–किबाड़ भी उखाड़ कर बेच देता है। पत्नी और दोनों बच्चे इतने दुखी हैं कि उन्हें दो वक्त की रोटी तक मयस्सर नहीं हो रही है। इसी बीच बड़ा बेटा भाग कर कलकत्ता चला जाता है। लेकिन इसी दरम्यान शराबी पति दूसरी औरत को रखैल बनाकर घर में ले आता है। उसकी पत्नी और भी दुखी होती है। पर सब्र करती है और उस औरत को भी रहने देती है। वह उस दूसरी औरत से विनती करती है कि वह उसके पति को नशा छोड़ने के लिये मनाये, पर वह औरत उल्टे उसी को बुरा–भला कह कर धमकाने लगती है। यह नाटक दलित स्त्री को मनु के कानून के तहत पति के चरणों में ही रहने की शिक्षा देता है, भले ही उसका पति कितना ही पतित और अत्याचारी क्यों न हो।

(यह आलेख लेखक की पुस्तक 'लोक में प्रतिरोध' में मौजूद है, जो प्रकाशनाधीन है)

कब होगी दूर 'अछूत की शिकायत'

संजय कुमार

'जनगणन 2011'में जातिगत जनगणना की चर्चा से ही भूचाल सा आ गया है। मीडिया में एक तरह का अघोषित युद्ध लेखकों ने छेड़ रखा है। कोई विरोध में खड़ा है तो कोई समर्थन में। हाल आरक्षण वाला है। तर्क पर तर्क दिये जा रहे हैं। सच्चाई को दरकिनार कर हर कोई अपनी बात मनवाने में लगा है कि वह जो कह रहा है वहीं सच है बाकि सब गलत? लेकिन सबसे बड़ा सवाल यह है कि जातिगत जनगणना का विरोध आखिर क्यों? तर्क दिया जा रहा है कि इससे मानव–मानव में दूरी बढ़ेगी? जातिवाद को बढ़ावा मिलेगा? सच यह है कि आज के भारतीय वर्ण व्यवस्था वाले समाज में हर कोई इसके घेरे में हैं। मजेदार बात यह है कि इस वर्ण व्यवस्था में कई जगहों पर लोगों को आवेदन फॉर्म आदि दस्तावेजों पर अपनी जाति भरनी पड़ती है। वैसे कोई भी इसका विरोध नहीं करता है। मसला जनगणना का है और बौखलाहट शायद इसके कथित परिणाम से?

आजादी के इतने साल बाद भी सवर्ण सामाजिक व्यवस्था में किसी ने दलितो को अपनाने व बराबरी का दर्जा नहीं किया? आज भी उनके मंदिर में घुसने पर अघोषित रोक है, हक की बात करने पर दलित की जीभ काट ली जाती है, सरेआम मारा–पिटा जाता है, उनके लिए अलग से कुंआ और न जाने क्या–क्या? दलितों के साथ होते अन्याय की चर्चा आये दिन मीडिया में होती रहती है। कहने के लिए उन्हें आरक्षण मिला है, जिस पर समाज का एक तबका नाक–भौं सिकोड़ता रहता है। वर्षो से समाज के अंदर जो बराबरी–गैरबराबरी का मामला है–बरकरार है। सवाल उठता है कि क्या सवर्ण समाज ने दलितों को बराबरी का दर्जा दिया है? आश्चर्य है कि आज हम जाति का विरोध कर रहे है। विराध करने वालों ने कभी जाति आधारित समाज के खात्मे की बात की है? किया भी तो हलके ढंग से। जातिगतसूचक सरनेम को हटा नहीं पाये। बात केवल दलितों के लिए नहीं है यही बात ओबीसी के साथ भी है। खतरा सवर्ण समाज को दिखने लगा है। समाज की बागडोर अपने पास रखने वाले सवर्ण समाज की जब जातिगत व्यवस्था को तोड़ने में कोई भूमिका नहीं रही तो आखिर जातिगत जनगणना से उनके पेट में गुदगुदी क्यों। चलिये 1914 में एक डोम की लिखी कविता पर नजर डालते हैं जो आज भी देश के कई क्षेत्रों में इसकी प्रासंगिकता साफ नजर आती है।

अछूत की शिकायत –हीरा डोम

हमनी के राति दिन दुखवा भोगत बानी
हमनी के सहेबे से मिनती सुनाइबि।
हमनी के दुख भगवानओ ने देखता जे,
हमनी के कबले कलेसवा उठाइबि।
पादरी सहेब के कचहरी में जाइबि जा,
बेधरम होके रंगरेज बनी जाइबि।
हाय राम! धरम न छोड़ते बनत बाटे
बेधरम होके कैसे मुहंवा देखाइबि।
खंभवा के फारि पहलाद के बचवले जे,
ग्राह के मुंह से गजराज के बचवले।
धोती जुरजोधना कै भइया छोरत रहै,
परगट होके तहां कपड़ा बढ़बले।
मरले रवनवां के पलले भभिखना के,
कानी अंगुरी पे धइके पथरा उठवले।
कहवां सुतल बाटे सुनत न बाटे अब,
डोम जानि हमनी के छुए से डेरइले।
हमनी के राति दिन मेहनत करीले जा,
दुइगो रुपयवा दरमहा में पाइबि।
ठाकुर के सुख से त घर में सुतल बानीं,
हमनी के जोति–जोति खेतिया कमाइबि।
हाकिमे कै लसकरि उतरल बानीं,
उहओं बेगरिया में पकरल जाइबि।

मुंह बान्हि ऐसन नोकरिया करत बानीं,
ई कुलि खबरि सरकार के सुनाइबि।
बभने के लेखे हम भिखिया न मांगब जा,
ठाकुरे के लेखे नाहि लउरी चलाइबि।
सहुआ के लेखे नहि डांडी हम मारब जा,
अहिरा के लेखे नहि गइया चोराइबि।
भंटउ के लेखेन कवित्ता हम जोरब जां,
पगड़ी न बान्हि के कचहरी में जाइबि।
अपने पसिनवां के पइसा कमाइब जां,
घर भर मिली जुली बांटि चोंटि खाइबि।
हड़वा मसुइया कै देहियां है हमनी कै,
ओकरै के देहियां बभनओं कै बानी।
ओकरा के घरै–घरै पुजवा होखत बाजे,
सगरै इलकवा भइलैं जजमानी।
हमनी के इनरा के निगिचे न जाइले जां,
पांके में से भरि भरि पियतानी पानी।
('सरस्वती' के सितम्बर,1914 में प्रकाशित)

हीरा डोम ने उस समय के दलित संवेदना को जिस ढंग से कविता में रखा उसका स्वरूप आज भी बरकरार है। दलित के दुःख दर्द और उसके पीड़ा के प्रति समाज ही नहीं भगवान द्वारा आंख मूंद लेने पर उन्हें कोसते हुए, उस पीड़ा से निकलने के लिए धर्मान्तरण की तरफ मुखतिब होता है लेकिन अंतिम क्षण में उसे खारिज कर देता है। और इसके पीछे दलित का आत्म सम्मान (कैसे मुहंवा देखाइबि) सामने आ जाता है। हीरा डोम कहते हैं–

हमनी के दुःख भगवानओं ने देख ता जे,
हमनी के कबले कलेसवा उठाइबि।
पादरी सहेबे के कचहरी में जाइब जा,
बेधरम होके रंगरज बनी जाइबि।
हाय राम ! धरम न छोड़ते बनत बाटे,
बेधरम होके कैसे मुहंवा देखाइबि।

ऐसा नहीं कि हीरा डोम भगवान से डर कर धर्मान्तरण को खारिज करते हैं बल्कि अगले ही क्षण उनकी कविता डोम को छूने से डरे भगवान के सामने खड़ा हो जाता है।

खंभवा के फारि पहलाद के बचवले जा,
ग्राह के मुंह से गजराज के बचवले।
धोती जुरजोधना कै भइया छोरत रहै,
परगट होके तहां कपड़ा बढ़बले।
मरले रवनवां के पलले विभीषण के,
कानी अंगुरी पै धैके पथरा उठवले।
कहवां सुतल बाटे सुनत न बाटे अब,
डोम जानि हमनी के छुए से डेरइलें ।

खंभा फांड कर प्रह्लाद को, ग्राह के मुंह से गजराज को, द्रोपदी को बचाने के लिए कपड़ा देने, रावण को मारने व विभीषण को पालने, कानी उंगली पर पहाड़ उठाने वाले भगवान से हीरा डोम साफ शब्दों में कहते हैं कहां सोये हैं, सुनते नहीं या डोम को छूने से डरे हैं? डोम से डरे भगवान अपने आप कई सवाल छोड़ जाता है। भगवान और समाज डोम के स्पर्श से भले ही कतराते हो। लेकिन कहा जाता है कि इसी सामाजिक व्यवस्था में डोम के बिना मरने वालों को मोक्ष नहीं मिलता है। श्मसान घाट पर डोम राजा के हाथों दी गयी अग्नि से चिता को आग के हवाले किया जाता है। कैसी विडंबना है कि जीते जी डोम के स्पर्श से कतराने वालों को जीवन के अंतिम क्षण में डोम की याद आती है। दूसरी ओर हीरा डोम की भगवान से शिकायत आज भी प्रासंगिक है। आये दिन खबर आती है कि समाज के ठेकेदारों ने गाहे–बगाहे मंदिर में ताला जड़ कर दलितों को पूजा पाठ व भगवान के दर्षन से रोका। तभी तो हीरा डोम कहते है कि भगवान प्रह्लाद को, ग्राह को, द्रौपदी आदि को बचाने आते लेकिन डोम को छूने से डरते हैं ?

कविता में हीरा डोम ने श्रम को भी मुद्दा बनाया है। दलितों के काम को गंदा व घिनौना माना जाता रहा है। इसके जवाब में हीरा डोम अन्य जातियों के श्रम पर सवाल उठाते हैं। और कहते हैं–

बभने के लेखे हम भिखिया न मांगबजां,
ठाकुरे के लेखे नहि लउरी चलाइबि।
सहुआ के लेखे नहि डांडी हम मारबजां,
अहिरा के लेखे नहि गइया चोराइबि।
भंटउ के लेखेन कवित्ता हम जोरबजां,
पगड़ी न बान्हि के कचहरी में जाइबि।
अपने पसिनवां के पइसा कमाइबजां,
घर भर मिली जुली बांटि चोंटि खाइबि।

मतलब, ब्राह्मणों की तरह हम भीख नहीं मांगेंगे, ठाकुरों की तरह लाठी नहीं चलायेगे, बनियों की तरह डंडी नहीं मारेंगे, अहीरों की तरह गाय नहीं चरायेगे। हाँ हम अपने पसीने से पैसा कमायेगे और मिल बांट कर खाएंगे। यह बात आज के तथाकथित स्वर्ण समाज के गाल पर तमाचा भी है। जब–जब आरक्षण का सवाल उठा तब–तब स्वर्णों ने आंदोलन चला कर विरोध किया। आंदोलन के दौरान झाड़ू लगाने, जूता में पॉलिस लगाने आदि श्रम को अपनाते हुए विरोध करते हैं। मानो यह काम बहुत ही घिनौना है और

शेष पृष्ठ 30 पर

कविता

तमिल कविता के भोजपुरी अनुवाद

अनुवादक- संतोष कुमार

(तमिल कविता)मूल कविता के नाम–
KAADAAGA SAMBU)
मूल कवि – रवि कुमार के भोजपुरी अनुवाद

पोखरा जहवां–––!

नरकट के झुरमुट आ झार–झंखाड़
जामल बा
खर पतवार, सेवार आ जलकुम्ही
एक दोसरा में लेपटाईल
पोखरा के पानी में अस तइरत बाड़ी सन
जइसे आधा पानी में
आ आधा ऊपर लउकत होखेसन
एही पोखरा में कबो कबो रह रह के
मगरमच्छ पानी में से मुड़ी निकल के झाँक के
फेर से पानी में ढूक जात बाड़े सन
एही पोखरा के एक कोना पर
हरिहर–हरिहर पियर पियर बांस
के बंसवारी बा
ओही बांस में पातिर पातिर
नन्हीं नन्ही छिउंकी बा
पोखरा में पनडुब्बी चिरई
डुबकी लगा लगा खेलत बाड़ी सन
आ कबो कबो मछरियों पानी में कूद फान करत बाडी सन
डुबकी मारत बाडी सन।
भोरे–भिनसारे, साँझा–पराते
शिवजी के मंदिर धोवाला
एही पोखरा के पानी से
जहवां तोहनी आपन मवेशीयो के नहवावे ल
आपन बचवन के गडतर–गुदरी धोवे ल
हग के पानी छुवे ल
खाली हमनी
एह पोखरा के
पानी ना छू सकेनी सन ।

■■■

भोजपुरी कविता

हीराडोम के कवि के बतकही

हम तऽ उपर बानी, घरे भगवान जी के,
हमरो समाज आजो, ओतने बेहाल बा।
काहे नाही कवि जी, करत विदरोह बाड़
देखऽ एमें बडकन जाति के कुचाल बा।।
जनि घबराई हीरा काका, हम जाग तानी
तोहरा सपनवा के सँचकी बनाएब
शोषक समाज बा, दबवले दलित के जे
ओकरा खिलाफ लाल झंडा उठाएब।।
काका कहऽ तारऽ बेटा धन बानी हमहूँ
दलित समाजवा के जाई के जगावऽ
कहऽ तनी पढ़े लोग, हाकिम हुकुम बने
ज्ञानी गुनी भइला के मोलवा बतावऽ।।
राखीं विश्वास नाही बाँव जाई बात राउर
अब ना अछूत हाथ जोरी रिरियाई
भोरे साँझ लागल बानी इहे समुझावे में
पढ़ले से न्याय के दुआर खुली जाई।।
बबुआ हो जिनगी सिरात बा अछूत सुनत
कतहीं अँजोर नाही सगरे अन्हार बा
लात से दबाइल अधिकार बाटे रातो दिन
बडका कहावे वाला भारी खूंखार बा।।
रउरा निचिन्त रहीं, सरगे से अइकी
दलित समाज आगू, बा खडियाता
हमरो कलम त अछूते के समरपित
जेतना लिखाता, उनका ही ला लिखाता
देश के भविष्य आजू लिखे वाला उहे बाडे
लवे लवे छाही के उतान करी चलेले
देखी ना सिहात भा चिहात बाडे बढ़ लोगऽ
देखी के दलित के विकास हाथ मलेंलें।

■■■

अछूत के शिकायत एक युगान्तकारी रचना

डॉ. चन्द्रभान राम

भगवान बुद्ध के ज्ञान के बाती, बाल्मिकी के साधना के माटी, गाँधी के आन्दोलन के जनम देबेवाला अउरी बाबा साहेब के चेतना के सजोवेवाला कवनो अउरी ना उ त 'बिहार' हवे। जवना के माटी में भोजपुरी भाषा के सुगन्ध में उ वास बा। जेकरा से देश के कोना–कोना त सुवासित गइले बा परदेसी लोगन में एह भाषा के जसगान लमहर–लमहर सेमिनारन में देखे भा सुने के खूब मिलत बा। एही माटी अउरी भाषा के नायक, भोजपुरी दलित साहित्य के अगुआ 'हीरा डोम' रहनी जेकरा एकेगो रचना से मनुवादी लोगन के त कनवा खड़ा होइये गइल, सूतल दलित लोगन के भी देहिया में एतना बेचयनी भइल जवन एकरा पहिले कबो ना रहल। इ रचना अइसन ठोकल–ठेठावल बा जवना के पोर–पोर में जिनगी के अइसन दरद समाइल बा जे ना घोटाते बा ना उगलाते बा। कवि के रचना जवना के पसराव आगू बा उ आजू उतना ही निमन बा जे कलिहो रहें आईं 'हीरा डोम' के कविता में लुकाइल निमन विचारन के जानल जाव।

हीराडोम के कविता 'अछूत की शिकायत' आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सम्पादन में 'सरस्वती' पत्रिका में सन् 1914 में छपल। हम एह युगान्तकारी रचना के छपवइया के साधुवाद देत बानी जे ओह समय में दलित के लिखल त छोड़ी, ओकर परछाई ना देखल चाहत रहले। ओहिसन बेवसथा के नकार के जवन सम्पादक जी कइनी उ साचों मनीषी बानी। जेकर आदर्श इहवां झलकत बा। हीरा डोम आपन कविता के जरिये सच्चाई बतावत बानी जेके पढ़ला भा सुनला पर रोआ–रोआ कांप जाला। एह किसिम–किसिम के दुखवा से आपन समाज के बचावे खातिर कइगो संत लोगन के जनम भइल जे मनुवाद पर आपन लेखनी चलवले। ओह में कबीरदास, रैदास, ज्योतिबा फूले, अछूतानन्द, पेरियार भा डॉ. अम्बेडकर रहनी। एही लोगन के लेखनी से समाज में रक्तहीन वैचारिक क्रान्ति से समाज में बहुते बदलाव भइल जवना के दलित समाज ना भूला सकेला। साइत इहे चेतना से कवि हीरो डोम अपना हीया में उठल भाव के कविता के स्वर देके आवेवाला लोगन खातिर थाती बना गइनी। अइसन रचना के सउवा का कइयो सउवा मनावल जाव उ कमे लागि।

कवि के एह के अलावा त अउरी कवनो रचना न बा। बाकिर एकही रचना में जवन ताप भा पीरा बा उ दोसर में का होई। इ रचना में कवि के ओह रूप भा भाव के देखल जा सकल बा जेकरा भगवानों कहायेवाला से प्रश्न बा। एह सरल–गरल विचार के दोसे न हवे जवना में पतित अदमी दुखवा सहके कठोर बन गइल। कविता में आमलोगन के आवाज बा। जे बेवाकी से आपन बात सब लोगन के आगू रखाइल बा। अइसे त देखल जा रहल बाकी सगरो दलित लोक काव्य, लोकछन्दन में लिखल गइल बा। काहे की जवना धरती पर दलित लोक कवि जीयले ओहि धरती के राग में आपन रचना कइल यर्थाथवादी रहला में आपन आस मानेले।

चालीस पंक्तियन के कविता में पांच गो बन्द बा। अउरी सगरो बन्द में आठ गो लाइन बा। सगरो बन्द में जिनगी के जीये के अलग–अलग ढ़ग बा। समाज के दुतकार से कवि उबलल जा तारे। उनकर केहु पर भरोसा ना रहल बा? काहे ना उ भगवाने होखस? उ अपने आपे से पूछतारे की हमनी के अछूत कइसे? जवना के भाव आगू आइल कविता में बा –

हमनी के रात दिन दुखवा भोगत बानी।
बे धरम होके कइसे मुहवाँ देखइबि।।1

दुखो सहे के भी एगो सीमा होला। उहो दुख–दुख ना होला जवना के संताप से शरीर के रोआ–रोआ कराह जाव। कवि कहत बानी कि का हमनी खातिर भगवानो नइखन जवन एतना जुलूम के नइखन देखत? मनवा में छिपल भाव के बेर–बेर दोहरावत चाहत बाड़े की एह दुख से छुटकारा पावे पुरखा–पुरनिया के संयोगल भा अपनावल

धरम से कवि के मन तनिको भटकत नइखे। एह मौलिक छंद में कवि मनुवादी समाज के कुण्डलीमारन के इ बता देत बाड़े की तोहरा से कही जादा हमनी के एह धरमवा पर आस बा जवन देखावटी नइखे उ हमरा हीया में ही समाइल बा। दूसर बन्ध में कवि भगवान के उबारे वाला मनले बानी। ओहू में दलित के उपेक्षा ही लउकत बा –

खंभवा के फारि पहलादके बंचवले जे।
डोम जानि हमनी के छुए से डेरइले।।2

जेकरा रक्षा में सगरो संसार जीयत बा का ओकरो सामने छोट–बड़, ऊँच–नीच के बात बा। बाकिर दलित समाज के इ लागत बाकी भगवान के भी दुगो रूप इहवा झलकत बा। तीसरा बन्ध में कवि दलित के उपहास से त घबराते बाडे, बाकिर शोषण से नइखन उबर पावत।

हमनी क रात दिन मेहनत करीलेजां।
ई कुलि खबरि सरकार के सुनाइबि।।3

अदमी कवनो मेहनत मजदूरी एही खातिर नू करेला की ओकरा लोग लइकन भा घर परिवार के परवरिस रूखा–सुखा समय से खाके तनिक ठीक ठाक से बीत जांव। बाकिर एतनो मेहनत पर ओकरा लोगन के गुजर ना हो सकेला त ओहिसन नोकरी के कइला में का बा। दलित दलदल में फसल (भसल) आपन जिनगी के ढ़ोवत बारे। जेकरा सहारा देबेवाला एह लोक का परलोक में भी नइखे लउकत। अइसन समयन में अदमी के धरवइया अदमिये होला। अदमी इज्जत से जीये नाहि त उ मरले समान बा। चउथा बन्ध में कवि सभ्यता, संस्कृति जवन समाज के रीढ़ होला। ओह में लुकाइल छोट विचारन के आगू रखले बानी –

बभनेके लेखे हम भिखिया ना मांगबजां।
घर भर मिलि जुलि बांटि चोटि खाइबि।।4

मेहनत करेवाला सबन के अपने मेहनत पर भरोसा होला। उ समाज क मकरजाल से दूर रहके आपन जिनगी जीये लें। एह समाज में अइसन बिडम्बना बाकी मेहनत केहु करत बा सुख केहु भोगत बा। जवना के कवि अपना रचना में परोसले बानी। पांचवा अउरी आखिर में कवि मनुवादी विचारधारा के नकार के इहे बतावे चाहत बानी की एह समाज के बँटवारा जनम के आधार पर नाहि, करम के आधार पर होखे के चाही। जे सांच बा –

हड़वा मसुइबा के देहिया है हमनी के।
हमनी के एतनी काही के हलकानी।।5

जवन हाड़–मांस के दलित बाडे उहे हाड–मांस से त बाभनो बाडे। फेर इ जनम के दोस कइसे बा। अइसन असामनता जवना समाज में ठूस–ठूस के भरल परल होखे ओह समाज के जगावे खातिर सांच कहीं त हीरा डोम के कविता के साहित्यिक अवदान निमन बा। इहां के कविता परत–दर–परत त प्रासंगिक रहबे करि।

दलित साहित्य के जवने बेरा इयाद कइल जाई। यानि भोजपुरी दलित साहित्य में अगुआ के रूप में सांचे कहीं त युगान्तकारी इ रचना बनल रही। जवना समय में एह समय में एह रचना के कवि लिखले रहनी उह समय दलित के उत्पीडन अइसन ढ़ग से होत रहे की उ चाहीयो के आपन शोषण के उजागर ना करत पावत रहले। काहे की मनुवादी समजा सुने के ना चाहत रहे। बाकिर कवि सभ सह के मन के उद्गार के उ रचना में सहेज के चल गइले त उहे नू आजो हम दलितन खातिर थाती बन गइल। हम त इहे कहेब की केहू सव गो रचना करि तबो उ आसन ना पाई जवन एगो रचना करके हीरा डोम (दलित साहित्यकारन में) भोजपुरी दलित साहित्यकारन में अमर हो गइनी। धन्य ओ माई के बा जेकर कोखी में अइसन लाल जनमले।

■■■

शंभु विश्वकर्मा के मगही कविता

तू मनुवाद के पोसल हउअ
हम होरी धनिया के बेटा हई
तू पढ़ल लिखल गोबर गणेश
हम गुरू पिंडा के सोंटा हई
हम फार कुदार से रह रह के
आपन भाग बनावेनी
तू भरभर हाथ अंगूठी पहिरे ल
आपन भाग्य बनावे ल
हम जाति धरम में लागल आग पर
ठंडा जल बरसावेनी
तू जाति धरम के ढ़ेरी में
तितकी रोज लगावे ल
हम सड़ल मुरदा के गाड़ेनी
हम सड़ल मुरदा के गाड़ेनी
(साभारः मगही पत्रिका)
अनुवादक : संतोष पटेल

■■■

साक्षात्कार

भोजपुरी कई मायने में हिंदी से अलग है : राजेन्द्र प्रसाद सिंह

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह भोजपुरी और हिंदी के प्रमुख भाषावैज्ञानिक एवं आलोचक हैं। पूर्वोत्तर भारत की भाषाओं पर सम्पूर्ण रूप से काम करनवाले वे हिंदी के पहले भाषावैज्ञानिक हैं। उन्होंने एक साथ पंचानवे भाषाओं का शब्दकोश संपादित किया है। वे ऐसे पहले आलोचक हैं जिन्होंने हिंदी साहित्य में सबाल्टर्न अध्ययन का सूत्रपात किया। भोजपुरी में दलित चेतना को रेखांकित करनेवाले भी वे पहले आलोचक हैं। साथ ही भोजपुरी का पहला त्रिभाषी कोष का संपादन करने का श्रेय भी उन्हें प्राप्त है। भोजपुरी भाषा को लेकर ''भोजपुरी जिंदगी'' के संपादक एवं युवा कवि संतोष पटेल ने अंतरराष्ट्रीयख्यात भाषावैज्ञानिक डॉ. राजेन्द्रप्रसाद सिंह से अभी हाल ही में एक साक्षात्कार लिया है। प्रस्तुत है पूरा साक्षात्कार ः-

1. प्रश्नः आप मानते रहे हैं कि भोजपुरी कई मायने में हिंदी से अलग है। मेरी जानकारी में तो यह सिर्फ हिंदी की लोकबोली है।

उत्तरः भारतीय भाषाविज्ञान भी यही बतलाता है कि भोजपुरी बोली है। पहले हिंदी की 17 बोलियाँ मानी जाती थी, उसके पहले सिर्फ 8 मानी जाती रही है। अब हिंदी की बोलियाँ 48 हैं। ऐसा क्यों? जाहिर है कि भारत में भाषाई अस्मिता की पहचान ने कई बोलियों को स्वतंत्र किया है। नागपुरी एक समय में भोजपुरी की उपबोली थी, पर आज यह स्वतंत्र हो चुकी है। वह अब भोजपुरी की उपबोली नहीं रही। ऐसे ही पूर्वी मगही की प्रमुख उपबोलियों में कुरमाली, पंचपरगनिया और खोरठा की गिनती होती रही है। पर अब सभी मगही से स्वतंत्र हो चुकी हैं। कुरमाली, पंचपरगनिया और खोरठा आदि का भी अब स्वतंत्र पहचान बन चुकी है। समय बदल रहा है। इसलिए भाषाविज्ञान की पुरानी परंपराएँ भी बदल रही हैं। किशोरीदास वाजपेयी ने तो यहाँ तक कह डाला है कि हिंदी की बोलियाँ वस्तुतः स्वतंत्र भाषाएँ हैं। यदि आप भोजपुरी को हिंदी की बोली मानते हैं तो बंगला, गुजराती आदि को भी मानिए।

2. प्रश्नः ऐसा कहा जाता है कि हिंदी के शब्दों और उसके ढाँचे को भोजपुरीकरण कर दिया जाए तो वह भोजपुरी हो जाएगी। फिर हिंदी और भोजपुरी में फर्क कैसा ?

उत्तरः यह बात तो उर्दू पर भी लागू है। यदि हिंदी वाक्यों से संस्कृत आदि की शब्दावली को बाहर करके अरबी–फारसी की शब्दावली को रख दिया जाए तो हिंदी भी उर्दू हो जाएगी। फिर क्या यह माना जाए कि उर्दू नाम की कोई स्वतंत्र भाषा नहीं है? भोजपुरी तो कई मायने में हिंदी से अलग है, कहीं वह उर्दू से भी ज्यादा अलग है। भोजपुरी की सिर्फ शब्दावली ही नहीं बल्कि उसके परसर्ग, उपसर्ग, वाक्य–विन्यास आदि भी हिंदी से

अलग हैं। हिंदी की जो सर्वाधिक बड़ी विशेषता ध्यान आकृष्ट करती है, वह है कर्ता के ''ने'' चिह्न का प्रयोग तथा उसकी सहायक क्रियाएँ, यथा ''हैं'', ''था'', ''गा'' आदि। पर भोजपुरी के वाक्य-विन्यास में कर्ता परसर्ग ''ने'' का प्रयोग ही नहीं होता है। ऐसे ही हिंदी की सहायक क्रियाएँ ''हैं'', ''था'', ''गा'' आदि भोजपुरी में सिरे से गायब हैं। भोजपुरी की सहायक क्रियाएँ यथा बा, बाट, ताड़, बू आदि हिंदी की सहायक क्रियाओं से नितांत अलग हैं। फिर यह कैसे मान लिया जाए कि हिंदी का भोजपुरीकरण करने से वह भोजपुरी हो जाएगी।

3. प्रश्नः आपने अभी परसर्गों की बात की है। आप यह बतावें कि भोजपुरी के उपसर्ग हिंदी से भिन्न कैसे हैं ?

उत्तरः भोजपुरी के वैयाकरण गण प्रायः हिंदी के उपसर्गों और प्रत्ययों को ही भोजपुरी का भी बतला दिया करते हैं जो भ्रामक हैं। भोजपुरी में कई ऐसे उपसर्गों का प्रचलन है जो हिंदी में सिरे से गायब हैं। मिसाल के तौर पर, ''खेदल'' से भोजपुरी में एक उपसर्ग ''ल'' जोड़कर ''लखेदल'' शब्द बनता है। हिंदी में ''ल'' उपसर्ग तो इस रूप में नहीं है। ऐसे ही भोजपुरी में ''दोना'' से ''खदोना'' बनता है। क्या हिंदी में ''ख'' उपसर्ग है। ऐसे में दावे के साथ कहा जा सकता है कि भोजपुरी के कुछ उपसर्ग हिंदी से अलग हैं।

4. प्रश्नः भोजपुरी में संधि को लेकर विवाद है। कुछ लोग मानते हैं कि भोजपुरी में संधि-प्रकरण भी है। आप क्या मानते हैं?

उत्तरः देखिए। संस्कृत में तीन संधियाँ थीं-स्वर संधि, व्यंजन संधि और विसर्ग संधि। पर हिंदी में विसर्ग संधि की कोई अवधारणा नहीं है। स्वर और व्यंजन संधि हिंदी में प्रचलित हैं। पर भोजपुरी में कोई संधि नहीं है। भोजपुरी समास-प्रकरण में विश्वास करती है। इसमें समास द्वारा शब्दों का निर्माण होता है। यदि कहीं आपको लगे कि ''विश्वामित्र'' अथवा ''बखीर'' जैसे शब्द भोजपुरी में क्या हैं-संधि अथवा समास, तो आप दावे के साथ कह सकते हैं कि ये दोनों शब्द समास के उदाहरण हैं। संधि न तो ''विश्वामित्र'' में है और न ''बखीर'' में। विश्वामित्र का संधि-विच्छेद तो ''विश्व+अमित्र'' होगा। भला एक पिता विश्व का अमित्र (दुश्मन) नाम अपने पुत्र का क्यों रखेगा? इसलिए इसमें समास है अर्थात् विश्व का मित्र हो जो वह विश्वामित्र। ऐसे ही बकरी के दूध का बना हुआ ''खीर'' भोजपुरी में ''बखीर'' है। समास में दो पद आकर जुड़ते हैं। इसमें संधि की भाँति ध्वनियों का मेल नहीं होता है। पर क्या हिंदी में ''बखीर'' जैसे समासिक पदों की अवधारणा है? नहीं है। इसलिए मैं कह रहा हूँ कि भोजपुरी कई मायने में हिंदी से अलग है। हिंदी में एक उपसर्ग है और दूसरा प्रत्यय है। एक शब्दों के पहले लगता है और दूसरा शब्दों के बाद में जोड़ा जाता है। पर भोजपुरी के कुछेक शब्दों में मध्यसर्ग की भी अवधारणा है। ''खान'' को भोजपुरी में ''खादान'' भी कहा जाता है। यहाँ ''दा'' तो शब्द के मध्य में आया है। यह हिंदी की भाँति न पहले है और न बाद में है।

5. प्रश्नः भोजपुरी के शब्द-भंडार पर आपकी क्या राय है और यह बतावें कि यह हिंदी के शब्द-भंडार से अलग कैसे है?

उत्तरः हिंदी शब्द-भंडार का मूल स्रोत संस्कृत है तथा उसकी बोलियाँ हैं। पर उसकी बोलियों के शब्द-भंडार का मूल स्रोत हिंदी नहीं है। भोजपुरी आदि बोलियों में हिंदी से शब्द नहीं आए हैं बल्कि इधर से ही शब्द हिंदी में गए हैं। हिंदी का निर्माण हुआ है, पर भोजपुरी आदि का निर्माण नहीं हुआ है। बोलियाँ जनमानस के बीच युगों-युगों से स्वतः विकसित हुई हैं। यदि बोलियाँ नदी हैं तो हिंदी नहर है। नहर का निर्माण होता है, पर नदियाँ स्वतः बन जाती हैं। भोजपुरी के शब्द-भंडार में अनेक स्रोतों के शब्द हैं। नेग्रिटो, मुंडा, द्रविड़, आर्य-सभी के शब्दों से भोजपुरी के शब्द-भंडार भरे पड़े हैं। ''बादुर'' (चमगादड़) नेग्रिटो का शब्द है, ''चोन्हाइल'' (इतराना) मुंडा भाषा का शब्द है, ''केवाड़ी'' (दरवाजा) मंगोलॉयड शब्द है तथा ''कनखी'' (आँख की मुद्रा) द्रविड़ है। जाहिर है कि भोजपुरी के शब्द-भंडार अत्यंत फैला हुआ है और इसकी जड़ें इतिहास में गहरे पैठी हुई हैं।

6. प्रश्नः मैथिली आठवीं अनुसूची में शामिल हो चुकी है। क्या मैथिली अब भी हिंदी की बोली है?

उत्तरः जाहिर है कि मैथिली हिंदी की अब बोली नहीं है। आठवीं अनुसूची में शामिल होकर वह भाषा का दर्जा प्राप्त कर चुकी है। अब वह मराठी, गुजराती आदि की भाँति आठवीं अनुसूची की भाषा है। स्पष्ट है कि भोजपुरी भी जब आठवीं अनुसूची में शामिल होगी, तब रातो-रात वह भी ''बोली'' से ''भाषा'' हो जाएगी। आज भोजपुरी को आप हिंदी की बोली बता रहे हैं और कल आठवीं अनुसूची में शामिल होने के बाद आप उसे भाषा कहने लगिएगा। इसका मतलब यह है कि बोली को भाषा बनाने की क्षमता और अधिकार सरकार में है। पर मेरी राय यह है कि भोजपुरी आठवीं अनुसूची में शामिल हो या न हो, वह आठवीं अनुसूची में शामिल कई भाषाओं से अधिक समृद्ध है।

हीरा डोम के काव्य-चेतना

राजेश कुमार मांझी

भोजपुरी के दलित कवि हीरा डोम के अपना युग के महानायक कहल जाई त कवनो अतिश्योक्ति ना होई। इनका बारे में जेतना भी चर्चा-परिचर्चा आउर वर्णन कइल जाए उ कमे होई। हीरा डोम के कविता के एगो अलगे विशेषता बाटे। इनका के आधुनिक कबीर के नाम से भी संबोधित कइल जा सकेला काहे से कि भोजपुरी साहित्य के इतिहास में हीरा डोम एगो प्रमुख हस्ताक्षर के रूप में आपन अमिट छाप छोड़ गइल बाड़ें। इनकर जन्म बिहार के दानापुर में 1885 में भइल रहे। बाकिर इनकर जनम, शिक्षा दीक्षा आ परिवार के बारे में अभी तब कवनो प्रमाणिक दस्तावेज नइखे मिलल पर इनकर लिखल अछूत की शिकायत भोजपुरी के प्रथम दलित कविता के साथे साथ भारतीय भाषा में एगो दलित कवि द्वारा लिखल पहिलका दलित कविता मानल जाला जवना के प्रकाशन 1914 में सरस्वती पत्रिका में महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में भइल रहे।

हिंदी के महान उपन्यासकार मुंशी प्रेमचंद के तरह अगर कवनो रचनाकार भारत के सुदूर गाँव-देहातन के भोला-भाला किसानन-मजदूरन के समस्या, अभाव, आकांक्षा आउरो शोषण-उत्पीड़न के सजीव चित्रण कइले बाड़ें त उ केवल हीरा डोम ही कइले बाड़ें। मानल जाव त उ सही अर्थ में जन-जीवन के एगो कुशल चितेरा रहलन। हीरा डोम उहे लिखलन जवना के उ अपना प्रत्यक्ष नयनन से देखलन आ हृदय से महसूस कइलन। आँखीयन से देखले समस्या, बुराई, अव्यवस्था, दुःख-दर्द आ यातना-प्रताड़ना के एगो वास्तविक चित्र अपना कविता के माध्यम से प्रस्तुत करे के कोशिश कइलें। सामाजिक सच्चाई आउरो यथार्थ के निरूपित करे में हीरा डोम तनिको नइखन चूकल। हीरा डोम देश-काल में व्याप्त बुराई, परिस्थिति, विसंगति आदि के सपाट बयानी के संग चित्रित कइले बाड़ें।

हीरा डोम अपना समय के एगो सशक्त कवि रहलें। उ एगो अइसन कवि रहलें जेकर जुड़ाव सामान्य जन के कठिनाई आ दुःख-दर्द से रहे। नैसर्गिक सुंदरता के जगह भोजपुरिया प्रदेश के खेत-खलियान में पूरा लगन से कमर तोड़ परिश्रम करेवाला किसान-मजदूर हीरा डोम खातिर आर्कषण के केंद्र रहे। किसान आ मजदूर वर्ग के समस्या पर आधारित उनकर आज के युग में भी अपना महत्व के कायम रखले बा आ ओकर प्रासंगिकता तनिको कम नइखे भइल।

एकरा अलावे ध्यान देबे वाला इहो बात बाटे कि कमर तोड़ परिश्रम के उपरांत ओह समय भी किसान-मजदूर परिवार भूखे सूतत रहे आउरो वर्तमान समय में भी प्रतिकूल परिस्थिति के चलते आत्मदाह कर रहल बा जवना के प्रत्यक्ष उदारण विदर्भ के घटना बारी सन। हीरा डोम के समय में भी किसान-मजदूर के लगे कवनो विकल्प ना रहे आउरो आजुओ ई संपदाहीन दलित वर्ग दिशाहीन मारल मारल फिरत बाटे।

कवि हीरा डोम के कविता 'अछूत के शिकायत' के प्रत्येक पंक्ति एह बात के परिचायक बाटे कि उ बहुत दूरदर्शी कवि रहलें जे आपन लेखनी लोकहित के भावना से दुःख-दर्द, यातना, शोषण, उत्पीड़न और संघर्ष पर चलवलें।

इहवाँ एगो महत्वपूर्ण बात के उल्लेख कइल आवश्यक बुझात बावे। कि केदारनाथ अग्रवाल छायावाद के प्रमुख कवि पंत, प्रसाद, निराला आ महादेवी वर्मा के तरह कुदरत के स्वप्निल दुनिया के चितेरा कबहुँ ना रहलें। एकरा स्थान पर हीरा डोम कविता में अभावग्रस्त गाँव-कस्बा के नैसर्गिक रूप के झलक मिलला। उनकर उद्देश्य त गाँव-देहात के किसान-मजदूर के साथ बइठ के उनका लोगिन के एगो सच्चा तस्वीर के कविता के रूप में बनावल भर रहे।

हीरा डोम के लिखल अछूत की शिकायत नामक कविता एह बात के परिचायक बा कि कवनो अनुभवी कवि ही कवनो दोसरा आदमी के पीड़ा आउरो दुःख-दर्द के शब्द-चित्र के माध्यम से कविता के रूप हमनी के सामने रख सकत बा।

एह सबके आधार पर कहल जा सकला कि हीरा डोम के जहाँ एक ओर समय के समुंदर में से डुबकी मार

के जीवनी शक्ति के बहुमूल्य मोती के चयन करे में समर्थ बा ओही जगहा पर उनकर कविता तत्कालीन भोजपुरिया समाज में व्याप्त समस्या, कुरीति, जटिलता, विसंगति आदि के व्यंग्यात्मक ढ़ंग से अभिव्यक्त करे में पूर्ण रूप से सक्षम बा। सामान्य जन के पीड़ा आ दुःख–दर्द अउरो अभाव के कसक उनका कविता में देखल जा सकेला।

अंत में इ कहल जा सकेला कि हीरा डोम भारतीय दलित समाज के उत्थान आ विकास के इच्छुक रहलें। उ समाज में दलित वर्ग के सम्मान आउरो समान अधिकार देबे के पक्षधर रहलें आउरो सामाजिक कुरीति आ बुराई, छुआ–छूत के समूल मिटावल चाहत रहलें। उनकर उद्देश्य दलित, गरीब आ असहाय लोगिन के उद्धार कइल रहे।

एह आधार पर इ कहल जा सकेला कि भोजपुरी के दलित कवि हीरा डोम मानवता के पुजारी रहलें। परिवर्तन में उनकर पूरा विश्वास रहे। उनकर इहो मत रहे कि यदि लोग सामाजिक अव्यवस्था के खिलाफ एकजुट हो जाई त कवनो भी शक्ति कवनो भी दलित के साथ अनाचार ना करी। उनका कविता से इहो विचार के पता चलत बावे कि यदि समाज के बुद्धिजीवी लोग आ सच्चा समाज सेवी आगे बढ़के अपना– अपना कर्तव्य के पूरा करीहें त देश–समाज के सब समस्या अपने आप खत्म हो जाई। एही से हम भोजपुरी दलित कविता के महाकवि हीरा डोम के रचनाशीलता आ विचार आउरो व्यक्तित्व के सादर प्रणाम करत बानी जकरा काव्य के महत्ता आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी 1914 में ही पहचान गइल रहलें।

पृष्ठ 23 का शेष

जैसे कि यह सिर्फ दलितों का ही काम हो! ऐसा करके तथाकथित स्वर्ण समाज आज भी सदियों पुरानी दृष्टिकोण रखता है। ऐसे में हीरा डोम की शिकायत उनके वैचारिक सोच पर भारी पड़ जाता है।

अंत में हीरा डोम एक बड़ा ही मानवीय सवाल उठाते हैं जो आज भी यथावत है। देखिये इसकी बानगी–

हड़वा मसुइया कै देहियां है हमनी कै,
ओकरै के देहियां बभनओं कै बानी।
ओकरा के घरै घरै पुजवा होखत बा जे,
सगरै इलकवा भइलैं जजमानी।
हमनी के इनरा के निगिचे न जाइलेजा,
पांके में से भरि भरि पियतानी पानी।

कवि इसमें आदमी–आदमी के बीच के विभेद को सिरे से खारिज करते हुए कहते हैं एक ही हाड़ मांस को देह हमारा भी है और ब्राह्मण का भी, फिर भी ब्राह्मण पूजा जाता है। पूरे इलाके में ब्राह्मण की जजमानी है और हम दलितों को कुआं के पास भी नहीं जाने दिया जाता है, कीचंड़ से पानी निकाल कर पानी पीते हैं। सच भी है आज भी दलितों को उन कुओं से पानी नहीं भरने दिया जाता है जहां स्वर्ण जाति के लोग पानी भरते हैं। गलती से कोई दलित कुआं के पास चला भी गया तो उसका हाथ–पैर तोड़ दिया जाता है।

करीब एक सौ साल पूर्व लिखी हीरा डोम की यह कविता आज भी जीवंत व प्रासंगिक है। हीरा डोम ने कविता के माध्यम से अपनी जाति की संवेदनशीलता को सामने लाया साथ ही अपने आत्म–सम्मान को स्थापित भी किया, जो अपने आप में बड़ी बात है। महादलित विमर्श की जब–जब चर्चा होती है तब–तब बिहार के हीरा डोम की वह शिकायत सामने आती है। जो उन्होंने 1914 में की थी।

डोम जाति की पीड़ा को हीरा डोम ने शब्दों में वर्षों पूर्व पिरोया था। देश आजाद हुआ, हालात बदले, लेकिन हीरा डोम के लिखे एक–एक शब्द आज भी प्रासंगिक है। भगवान, समाज, व्यवस्था व सरकार से की गई भोजपुरी में उनकी शिकायत को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'अछूत की शिकायत' नाम से कविता के रूप में सरस्वती के सितम्बर, 1914 के अंक में प्रकाशित किया था। दलित विमर्श में हस्तक्षेप करती हीरा डोम की कविता 'सरस्वती' में प्रकाशित होने वाली संभवतः पहली और एकमात्र भोजपुरी कविता थी और वह भी एक दलित की। भोजपुरी में लिखी गयी कविता ने वर्षों से भारतीय समाज में उपेक्षित और अछूत रहे डोम जाति के उस दर्द को सामने लाया है जिसे देख हर कोई अपनी आंखें मूंद लेता है। जिसमें इंसान तो शामिल हैं ही भगवान भी पीछे नहीं हैं।

'अछूत की शिकायत' के बहाने

अमरेन्द्र कु. आर्य

इतिहास ने सदा सवर्ण मानसिकता से काम किया है और अपनी माटी की रक्षा के लिए खून–पसीना बहाने वालों के साथ अन्याय किया है । समाज के दबे–कुचले वर्ग ने समाज की तमाम विसंगतियों पर प्रहार किया है, खासकर सामंतवादी प्रवृतियों के खिलाफ । परन्तु इनमें से अधिकांश को संभ्रातों द्वारा या तो दबा दिया गया या नष्ट कर दिया गया । सवर्ण समाज ने लोकगीतों में हस्तक्षेप किया और लोकसंस्कृति को मात्र मनोरंजन, प्रदर्शन, पूजा–पाठ, संस्कार गीत या भजन गायकी तक समेट कर रख दिया । क्या कारण है कि हीरा डोम की मात्र एक कविता उपलब्ध हो पाई है । उनकी कविता के तेवर देखकर यह विश्वास नहीं किया जा सकता कि उन्होंने एक कविता ही लिखी होगी । संभव है, उनकी रचनाओं के तेवर देख, सवर्णों ने नष्ट कर दिया हो । हाशिए के लोगों की पीड़ा, जो लोक गीतों में व्यक्त हुई है, उसे दबाने तथा संस्कारगीतों के नाम पर धार्मिक, वैवाहिक और मनोरंजन प्रधान गीतों को साजिशन बढ़ाया गया है । लोकगीतों को इकट्ठा करने वालों ने भी चमरऊ गीतों में जातिदंश की पीड़ा व्यक्त करने वाले गीतों की उपेक्षा की है ।

सोच पाना भी असंभव सा लगता है कि सौ साल पहले अछूत जाति का कोई व्यक्ति पढ़ना–लिखना जानता होगा। लेकिन तब के समय के हीरा डोम का उल्लेख मिलता है। जाति की पीड़ा इतनी थी कि जब वो इस काबिल हुए कि अपनी बात कह सके तो अपनी व्यथा और दर्द को कहने के लिए उन्होंने कविता का सहारा लिया। हीरा डोम (जन्म–काल 1885 या 1886 ई। के आसपास) की लिखी कविता अछूत की शिकायत पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित की थी। भोजपुरी भाषा में लिखी पांच छंदों की इस कविता को खड़ी बोली के उस दौर में पहली दलित रचना होने का श्रेय है। यह कविता डोमवृत्ति में ही रहने का आर्तनाद है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जातियों के बीच अस्पृश्यजनों के साथ होते व्यवहार का भी हीरा डोम की यह कविता अत्यंत प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत करती है। बेधरम होकर ईसाई बनना दरअसल धर्मच्युत होने की इस हद की पीड़ा का द्योतक है कि मुंह दिखाने लायक नहीं रह जाएंगे, यानी इधर कुआं और उधर खाईं। ईश्वर भी अस्पृश्यों को छूने से डरता है। हीरा डोम ने अपनी पीड़ा संवेदना को (अपनी कविता) 'अछूत की शिकायत' से की थी। भोजपुरी में लिखी यह कविता सरस्वती के 1914 के अंक में प्रकाशित हुई थी। इस कविता में उस समय जो दलितों की पीड़ा थी, समाज में भेदभाव था, दलित को लेकर अमानवीय व्यवहार था, उसे कविता में पीरोकर हीरा डोम ने सरकार और भगवान को घेरने की सार्थक कोशिश तो की थी। साथ ही, समाज को भी कठघरे में लाकर खड़ा किया था। हीरा डोम ने दलितों के साथ गैर बराबरी के व्यवहार को इतनी मजबूती से उठाया था कि उसके एक–एक शब्द आज भी प्रसांगिक तो है ही और दलित आंदोलन से जुड़े लोगों के समक्ष सवाल भी खड़े करते हैं। सरकार बदली, व्यवस्थाएं बदली, लोग बदले, समाज और देश बदला लेकिन समाज के अंदर बराबरी और गैरबराबरी का दंश नहीं हटा। वंचितों की पीड़ा आज भी दिनो–दिन घटनाओं में साफ झलकती है। मंदिर में घुसने का सवाल हो या दलितों के साथ बलात्कार, उत्पीड़न या यों कहें हर जुल्म–सितम जारी है। कहने के लिए सरकारव्यवस्था में वंचितों का राजनीतिकरण कर दिया है। वंचितों का दलितिकरण कर विकास और समाज के मुख्यधारा से जोड़ने के लिए कई आयोगों का गठन कर दिया गया है लेकिन, साल दर साल गुजरता जा रहा है। वंचितों की पीड़ा संवेदना जस की तस है।

हीरा डोम द्वारा रचित यह कविता, उनके लिए भी जिज्ञासा के विषय हैं जिन्होंने कभी, गंवारों, की संस्कृति समझ, अनदेखा कर दिया था। शायद इसलिए कि इनके कविता में उनके समाज का यथार्थ और अक्स दोनों दिखाई देता है। समाज के संपन्न तबके की संस्कृति गैर सामाजिक, और आत्म केन्द्रित रही। उसकी आत्मा स्वान्तःसुखाय और अभिजात्यवर्गीय रही जबकि वंचितों की लोकसंस्कृति श्रम, संघर्ष और सत्ता के अमानवीयता के

विरूद्ध रही। सवर्ण समाज जहां एक ओर लोकसंस्कृतियों के बहाने अपनी कुलीनता का लबादा और सख्त करने की कोशिश करता गया वहीं दलितों ने लोकसंस्कृतियों के माध्यम से अपने ऊपर लादे गए तमाम वर्जनाओं यथा छुआछूत, धार्मिक निषेधों और ऊंच–नीच की दीवारों पर दस्तक दिया और उनको हिलाने के खतरे उठाये। हीरा डोम की एक मात्र प्राप्त कविता अपने तेवर और तंज के लिए मील का पत्थर बनी हुई है।

हीरा डोम की यह कविता हिंदू समाज में व्याप्त जाति–प्रथा पर सीधे चोट करती है। समाज का एक तबका आराम से बैठकर खा रहा है और दूसरा तबका काफी श्रम करने के बावजूद भी दाने–दाने के लिए मोहताज है। कवि हीरा डोम ने अपने अछूत जीवन की संपूर्ण वेदना को इस कविता के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

हमनी के राति दिन दुखवा भोगत बानी
हमनी के सहेबे से मिनती सुनाइबि
हमनी के दुख भगवनवो न देखता जे
हमनी के कब ले कलेसवा उठाइबि
पदरी सहेब के कचहरी में जाइबि जा
बेधरम होके रंगरेज बनि जाइबि
हाय राम! धरम न छोड़त बनता बा जे
बेधरम होक कइसे मुँहवा देखाइबि।।1।।

पहले छंद में कवि अपनी विनती अपने साहब को सुनाना है। कहता है कि हमलोग रात–दिन कष्ट भोग रहे हैं पर हमलोगों का दुख ईश्वर भी नहीं देख रहा है। तब आखिर हमलोग कब तक यह कष्ट भोगते रहेंगे। मेरा मन तो यह कहता है कि पादरी साहब की कचहरी में उपस्थित होकर अपना धर्म–परिवर्तन कर लें। परंतु दूसरा मन धर्म–परिवर्तन से रोकता है कि आखिर तुम ऐसा करके और बेधर्म होकर समाज के समक्ष कैसे मुँह दिखलाओगे,

खंभवा के फारि पहलाद के बँचवले जे
ग्राह के मुँहे से गजराज के बँचवले
धोती जुरजोधना के भइया छोरत रहे
परगट होके तहाँ कपड़ा बढ़वले
मरले रवनवा के पलले भभिखना के
कानी अँगुरी पे धके पथरा उठवले
कहवाँ सुतल बाटे सुनत न बाटे अब
डोम जानि हमनी के छुए से डेरइले।।2।।

दूसरे छंद में कवि पौराणिक प्रसंग को याद करता है और कहता है कि तुमने कभी खंभे को फाड़कर भक्त प्रहलाद की जान बचाई है और कभी ग्राह के मुँह से गजराज की रक्षा की है। इतना ही नहीं, तुमने तो चीरहरण के वक्त दुर्योधन के खिलाफ द्रौपदी की रक्षा भी की है। तुम्हारे रक्षात्मक कार्यों की एक लंबी सूची है। तुमने रावण को मारकर विभीषण का पालन किया है। कृष्णावतार में तुमने अपनी कानी अँगुली पर गोवर्द्धन पर्वत को उठाया है। पर मेरी विपत्ति के समय तुम कहाँ सो गए हो कि सुनते ही नहीं। क्या तुम मुझे डोम समझकर छूने से डर रहे हो,

हमनी के राति दिन मेहनत करीले जा
दुइगो रूपयवा दरमहा में पाइबि
ठकुरे जे सुख से त घर में सुतल बानी
हमनी के जोति–जोति खेतिया कमाइबि
हकिमे के लसकरि उतरल बानी जे
त अइओं बेगरिया में पकरल जाइबि
मुँह बान्हि ऐसन नोकरिया करत बानी
ई कुलि खबरि सरकार के सुनाइबि।।3।।

तीसरे छंद में कवि ने अपने कठोर श्रम का वर्णन किया है जिसके बदले में दो रूपया प्रतिमाह वेतन मिलता है। ठाकुर सुख से अपने घर में सोए रहते हैं और हमलोग खेत जोत–जोतकर कमाते हैं। हाकिम की जब फौज आती है, तब वह भी बेगारी करवाती है। हम तो एक सफाईकर्मी हैं जो मुँह बाँधकर अपनी सेवा देते हैं। मुझे ये सभी खबरें सरकार को सुनानी है।

बभने के लेखे हम भिखिया न माँगब जा
ठकुरे के लेखे नहिं लउरी चलाइबि
सहुआ के लेखे नहिं डांड़ी हम मारब जा
अहिरा के लेखे नहिं गइया चोराइबि
भँटऊ के लेखे न कबित हम जोरब जा
पगड़ी न बान्हि के कचहरी में जाइबि
अपना पसीनवा के पइसा कमाइबि जा
घर भर मिलि–जुली बाँटी–चोटि खाइबि।।4।।

चौथे छंद में कवि ने अपने स्थिति को दर्शाता है। हम तो ब्राह्मणों की भाँति भीख भी नहीं मांग सकते हैं। हम तो क्षत्रियों की भाँति लाठी भी नहीं चला सकते हैं। हम तो साहुओं की तरह डंडी भी नहीं मार सकते हैं। हम तो अहीरों जैसा गाय भी नहीं चुरा सकते हैं। हम तो भाँटो की तरह मनगढ़ंत प्रशस्तिमूलक कविताएँ भी नहीं रच सकते हैं। हम तो पगड़ी बाँधे कचहरी में भी नहीं जा सकते हैं। ये सभी कर्म हमलोगों की आत्मा के खिलाफ हैं और समाज इसकी छूट भी हमें नहीं देता है। हमलोग तो सिर्फ पसीना बहाकर कमानेवाले जीव हैं। उस पसीने की कमाई को हमलोग आपस में बाँटकर खाते हैं।

हड़वा मसुइया के देहियाँ ह हमनी के
ओकरे के देहिया बभनओ के बानी
ओकरा के घरे–घरे पुजवा होखत बा जे
सारे इलकवा भइलें जजमानी
हमनी के इनरा के निगिचे न जाइले जा
पाँके में से भरि–भरि पिअतानी पानी
पनही से पिटि–पिटि हाथ गोड़ तुड़ि देलें
हमनी के एतनी काही के हलकानी?5।।

पांचवे और अंतिम छंद में हीरा डोम ने जातिगत आधार पर ऊँच–नीच की बात को तार्किक ढंग से खारिज करते हुए कहा हैं कि शूद्र और ब्राह्मण दोनों का शरीर एक जैसे हाड़–मांस से बना हुआ है। पर ब्राह्मणों की पूजा क्यों घर–घर में की जाती है, यहाँ तक कि उसकी यजमानी पूरे इलाके में चलती है। दूसरी तरफ उसी हाड़–मांस से बने हुए डोमों को क्यों नहीं कुएँ के पास पानी भरने के लिए जाने दिया जाता है? हम लोग तो कीचड़ से पानी निकालकर पीने के लिए विवष हैं। इतना ही नहीं, यदि हमलोगों से किसी सवर्ण की चीजें नापाक हो जाती हैं तो हमें जूतों से पीटा जाता है। आखिर क्यों हमलोगों को इतना परेशान किया जाता !

डॉ। राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने अपनी पुस्तक–आधुनिक भोजपुरी के दलित कवि और काव्य में लिखा है – हीरा डोम की कविता एक सधे हुए कवि की रचना है। यह कविता वर्णिक है। इसका छंद मनहरण घनाक्षरी है जिसमें 16 या 15 वर्ण पर यति होती है और जिसका अंतिम वर्ण गुरु होता है। निश्चित रूप से 'अछूत की शिकायत' अपने संरचना–शिल्प के कारण याद की जाएगी। परंतु इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि यह हीरा डोम की पहली रचना नहीं रही होगी। भाव, संरचना–शिल्प और प्रतिपाद्य की दृष्टि से यह कविता अत्यंत बेजोड़ है। इसीलिए यह कहा जा सकता है कि यह कविता किसी सधे हाथों की रचना है और हाथ तो तभी सधते हैं, जब कोई रचनाकार इसका पूर्वाभ्यास करता है। कहना न होगा कि 'अछूत की शिकायत' के पहले और बाद में भी हीरा डोम ने अपनी कई रचनाएँ प्रस्तुत की होंगी। परंतु समय के साथ–साथ उनकी सभी रचनाएँ इतिहास के नीचे दफन हो गईं। यदि 'अछूत की शिकायत' भी 'सरस्वती' जैसी तथाकथित प्रतिष्ठित पत्रिका में नहीं प्रकाशित होती तो यह भी इतिहास के नीचे दफन हो जाती। हीरा डोम की कविता के तेवर देखते हुए लगता है कि उनकी तमाम कविताओं को समाज के कुलीन तबके द्वारा नष्ट कर दिया गया होगा।

डा. राजेन्द्र प्रसाद सिंह आगे लिखते हैं – इतना ही नहीं यह भी सत्य है कि हीरा डोम की तरह और भी कई प्रतिभाशाली कवि उस वक्त मौजूद थे। परंतु वे हिंदी साहित्य के इतिहास की मुख्य धारा में नहीं आ सके। ऐसा हीरा डोम के पहले भी हुआ, बाद में भी हुआ और आज भी हो रहा है।

■■■

कविता

ताँका

(5+7+5+7+7)

गंगा प्रसाद अरूण

**अकिल मिले
बेदाम खइले ना
धोखा खइले
समझदार बानीं
इशारा के समुझीं!**

**आन के दिल
जीतल करीं हम
मीठ बोल के
नेह–रिश्ता का राहे
तितिका बात काहे?**

**जस'ई–मेल'
बात फैलावे में
तस 'फीमेल'
भात भले पचा ली
बात कबहुँओं ना!**

**प्यार दिल में
गुस्सा जबान पर
दिल में ना जी
मन महुरइले
अदिमियो बिखाह।**

**भरे बेकारे
तिजोरी दौलत से
लोग लालची
घूस ना ले कबो
जमपुरी के दूत!**

**आड़ा तिरछा
बकत रहो लोग
चलत चलीं
लोग बकवास
रही उनुके पास!**

**कतनो छोट
मोमबत्ती जगावे
ओतने जोत
ढीठ बरत रहीं
हिनाई कइसन?**

**नर नारी में
अउर कुछ होखो
दोस्ती कबो ना
भले रही चाहत–
दुश्मनी– प्रेम–पूजा!**

**बात नीमन
कि दिल में उतरीं
ना कि दिल से
दिल के दउलत
बात बदउलत!**

**मुस्कात रहीं
रोआ ना सकी केहू
राउर मन
दुनिया साथ रही
मुदई कँहरिहें!**

**मुस्की में पाप
कइसे लीहीं नाप
ए माई–बाप!
लखार त नीमन
ना अस्तीन के साँप!**

■■■

भोजपुरी दलित साहित्य के दीपक हीरा डोम

रामजीत राम 'उन्मेष'

दलितन के चेतना दलितन के यातना से शुरू भईल। अइसे त दलित शब्द एगो अइसन शब्द ह जेकर नाम लिहले भर से दिमाग में एगो कौन्धियात बिजुली दउर जाला। दलितन के साथे हजारों हजार बरिस के अनाचार, दुराचार, व्याभिचार इहाँ ले कि जानवर से भी बदतर जीवन के एगो लमहर इतिहास बा। दीनता, हीनता, लाचार जीवन आजू के युग में एगो कहानी बनि के रह गईल बा। जवन कबो हकीकत के चादर में लिपटाईल रहे आ आजुओ देखे के थोडा बहुत मिलत बा। उ चादर इतिहास में दास प्रथा के रूपों में सजो के रखल बा। उ दलितन के हड्डी के खूंखार जानवर से भी लडे के पडल आ आह–कराह, तड़पत करेजा, घिरनी के नियन नाचत प्राण, बोकरल खून इतिहास में एगो दाग बन के रह गईल।

दलितन के तिल तिल जान मारल कबो मनोरंजन आ शान के बात होखत रहे। सांच कहल जाव त समय क संगे कुछ का, बहुत हद ले बदलाव आईल बा, बाकि ओह परिवर्तन में परिभाषा के साथे आ बदलाव के संगे सामंती वर्ग के सोच माँ काम करे के तरीका बदलल बा। काहे कि कुछ दलित में समय के साथे धीरे धीरे सहस पैदा भईल आ उ टूटल हड्डी के जोड़ के चेतना के शिखर पर चढ़े के हिम्मत कइलन। जेकर परिणाम भईल की शोषक वर्ग आपन बुद्धि के बल पर शोषण करे के तरीका बदल दिहलन। जेह में दिखाई भी ना दी आ खून पिए के भी मिळत रही।

दलित के साहित्य हीरा डोम के कविता 'अछूत के शिकायत' देखला पर इहे लागेला की उ कविता ना ह बल्कि दलित समाज के हजारों –हजार बारिस के लाचारी आ तड़पन ह। जवना में शोषक वर्ग, शोषित वर्ग के देह, मन पर त पूरा के पूरा कब्जा कइलहीं बाडन। बाकी उनकर आवे वाला पीढ़ी–दर–दर पीढ़ी पर भी कब तक उनकर कब्जा रही ई कहल बड़ा मुस्किल बा। हीरा डोम के आह भरल आत्मा आजूओ जइसे आँख फाड़ के देखता की गुलामी गईल नइखे बल्कि गुलामी के तस्वीर बदल गईल बा। उनकर कविता एह पीढ़ी के प्राण देके हिम्मत आ साहसरूपी शक्ति के संचार पैदा कइले बा। उनकर कविता लाचारी ना ह एगो अद्भुत शक्ति ह आ दलित चेतना के शिकार पर पहुंचे वाला मार्ग ह।

दलितन के यातना के भरल जिनिगी के चेतन बनावे में ना जाने केतना लोग आपन उमिर गवां दिहलन आ केतना लोगन के आपना उमिर गंवावे के पड़ी। एह कड़ी में संत शिरोमणि रैदास, दादू दयाल, महात्मा ज्योतिबा फुले, रामास्वामी पेरियार, गाडगिल, छत्रपति शाहूजी महाराजा, बाबासाहेब भीम राव आंबेडकर आदि दलित चेतना के महान विभूति भइलन। संत रैदास के त पूरा उमिर परीक्षा देवे में ही गुजर गईल त बाबा साहेब के ब्राह्मण व्यवस्था से लादे बीत गईल। दलित जागरण में बाबू जगजीवन राम के भी नाम आवेला, जे दलितन के जगावे के अथक प्रयास कइनी उनके प्रधानमंत्री बने से रोकल गईल त ई कहल जा सकेला की उनके भी दलित होखे के सजा मिलल।

अंत में ई कहल जाई की दलित साहित्य के बात जब जब होई दलित साहित्य के दीपक हीरा डोम के नाम प्रभात के किरिन के तरह सामने आ के खड़ा हो जाई आ उ किरिन दलित साहित्य के उत्थान में भरपूर बल देई।

■■■

युवराज!

अब संभाल रहल बाड़े
धरमराज के काम काज।
उनका मिलल बा आजादी
करस इतिहास में दखलअंदाजी
बदलस आपन सुविधा से
इनकर–उनकर सभकर
तारीख जनम के, मरन के,
पूछला प दे ताड़े तड़ से जबाब
अजी केकरा बाटे फुरसत
जे पढ़ी मोट मोट किताब
युग बा आज कंप्युटर के
जरूरत बन गइल बा आज
गुगल–फेसबुक नवही के,
साँच त ऊहे होई
जे हम लिखब
लोग ऊहे देखी पढ़ी,
करी जे केहू विरोध
त हम दांत निपोड़ लेब
हाथ दूनो जोड़ लेब,
वेवस लाचार होके
टुकुड़–टुकुड़ ताक रहल बाड़े
भगवान आ धरमराज
का बलती ना भइल
सौऊपन युवराज के ताज।

मनो कामना सिंह 'अजय'

■■■

हीरा डोमः महावीर प्रसाद द्विवेदी का एक षड़यंत्र

सतनाम सिंह

सरस्वती अपने समय की प्रसिद्ध पत्रिका थी। इसके संपादक वही महावीर प्रसाद द्विवेदी थे जिन के नाम से हिन्दी साहित्य का एक पूरा युग है 'द्विवेदी युग'। 'सरस्वती' के सितम्बर, 1914 अंक में उस की संपादकीय नीतियों के विरूद्ध एक भोजपुरी कविता छपी जिसका नाम था 'अछूत की शिकायत'। यह कविता हीरा डोम के नाम से छपी थी। पत्रिका की घोषित नीति यह थी कि इसमें संस्कृतनिष्ठ हिन्दी की रचनाएं ही प्रकाशित की जायेंगी, भोजपुरी– मैथिली आदि बोलीयों की नहीं। यहाँ तक कि पत्रिका उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी भाषा की रचनाएं भी नहीं छापती थी। ऐसे में यक्ष प्रश्न है कि फिर द्विवेदी जी ने 'अछूत की शिकायत' भोजपुरी कविता वह भी जाति से एक डोम कवि द्वारा लिखित कैसे छाप दी? दैनिक समाचार पत्र आज के इलाहाबाद संस्करण ने इस कविता को निम्न टिप्पणी के साथ प्रकाशित किया था। सितंबर 1914 ई. की 'सरस्वती' में पटना के हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' प्रकाशित हुई । यह भोजपुरी में है और संभवतः उस भाषा में लिखी हुई यह एक मात्र कविता है, जो द्विवेदी जी की सरस्वती में प्रकाशित हुई थी। हिन्दी में इससे पहले और बाद में भी किसी डोम (दलित, अछूत, डोम, भंगी, हेला) की लिखी कविता संभवतः देखने में नहीं आई है। हीरा डोम ने किसी से सरस्वती का नाम सुना होगा। मैथिली शरण गुप्त की तरह सरस्वती में कविता प्रकाशित कराकर प्रसिद्ध कवि बनने का स्वप्न तो शायद हीरा डोम ने नहीं देखा होगा, पर अपनी शिकायत सरस्वती के माध्यम से शिक्षित जनों तक उन्हें जरूर पहुँचानी थी । द्विवेदी जी ने साहसपूर्वक यह कविता अपने उस पत्रिका में छापी, जिसमें बड़े बड़े लोग छपवाने को तरसते थें। अपनी कविता में हीरा डोम ने उन पादरियों की आलोचना की, जो धर्म बदल देने की शर्त्त पर अछूतों की दशा सुधारने का वादा करते थे। हीरा डोम अपनी शिकायत भरे अंदाज में कथित दीनबंधु भगवान से कहा कि शायद तुम भी मुझे डोम (क्षुद्र,अछूत) जानकर छूने से डरते थे। अछूतो के सबसे बड़े उत्पीड़क गांव के जमीनदार थे जो खेतों में मेहनत करा के स्वयं घर में आराम से सोते थे। गांव के सर्वहारा–समुदाय की वर्ग–चेतना यहीं पहली बार साफ–साफ प्रतिविम्बित हुई है ।

दलित साहित्य के शताब्दी वर्ष पर विशेष

यह वह कविता है जिसे आधुनिक काल में किसी दलित द्वारा लिखित पहली कविता माना जाता है। इसी कारण से यह वर्ष हीरा डोम की कविता के शताब्दी वर्ष की तरह मनाया जा रहा है। दलित साहित्य विमर्श की पत्र–पत्रिकाएं उन पर लेख प्रकाशित कर रही हैं। इस महिमामंडन भरे माहौल के ठीक बीचोबीच पाठक यह जान कर अचंभित रह जाएंगे कि वास्तव में हीरा डोम नाम का कोई दलित कवि हुआ ही नहीं था। यह कविता स्वयं महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने छद्म नाम से प्रकाशित करवाई थी। उन्होंने यह कविता भोजपुरी में इसलिए लिखी, क्योंकि उनकी बूढ़ी आंखों में वर्णव्यवस्था का मोतियविंद था। वे द्विज थे और द्विजों की यह प्राचीन परंपरा रही है कि वे अपने संस्कृत नाटकों में दलित–उपेक्षित पात्रों के संवाद संस्कृत में नहीं, बल्कि प्राकृत जैसी गंवई भाषाओं में दिया करते थे। चुंकि संस्कृत देवभाषा है और उसी देवभाषा से निर्मित बताई जाती हिन्दी में वे हीरा डोम के नाम से कविता क्यों लिखते? यही वजह है कि उन्होनें इसके लिए भोजपुरी को चुना। सरस्वती में प्रकाशित इस कविता से पहले हीरा डोम की कोई रचना उपलब्ध नहीं है। ऐसे अज्ञात कवि की पहली रचना उस पत्रिका में कैसे छप गई जिस में छपने के लिए मैथिली शरण गुप्त भी तरसते थे। फिर, उस के बाद वे कहों चले गए। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भी उन का नोटिस क्यों नहीं लिया। क्या वे सिर्फ एक ही कविता लिखने भर के लिए पैदा हुए थे।

आज इस कविता को छपे सौ वर्ष हो गए हैं। उस समय सरस्वतीं जैसी पत्रिका में छपने वाला शायद ही कोई ऐसा रचनाकार हो जिस का जन्म स्थान, कुल और गाँव आदि अज्ञात हो। हीरा डोम ही क्यों गायब हो गए? यह कविता यदि हीरा डोम ने लिखी होती तो वे इस का शीर्षक 'अछूत की शिकायत' नहीं रखते। कविता में शैली 'हमनी के' से शुरु होती है तो वे इस का शीर्षक इसी

शैली में रखते। यह शिकायत कवि की अपनी शिकायत नहीं थी बल्कि उस के पूरे वर्ग की शिकायत थी। यदि वास्तव में यह कविता किसी हीरा डोम द्वारा लिखी गई होती, तो महावीर प्रसाद द्विवेदी उस का संक्षिप्त परिचय जरूर देते। कविता भोजपुरी में थी तो इस का शीर्षक हिन्दी में कैसे हो गया है? कविता का शीर्षक 'अछूत की शिकायत' है। कई स्थलों पर इसे 'अछूत की शिकायत' भी बताया गया है।

भोजपुरी के 'के' हिन्दी के 'की' में परिवर्तन इसलिए हो गया है क्योंकि तथाकथित हीरा डोम की भोजपुरी कविता के सिर पर जबरन हिन्दी शीर्षक की टोपी रख दी गई है। यदि यह कविता वास्तव में किसी हीरा डोम ने लिखी होती तो वह इस का शीर्षक 'डोम की शिकायत' करता। जो आदमी अपने नाम के साथ डोम लगा सकता था तो क्या कविता के शीर्षक में डोम लगाने से डरता? यदि यह सामूहिक वर्ग की शिकायत थी तो भोजपुरी का शीर्षक भोजपुरी में ही होता। डा. जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने भोजपुरी की चार बोलियों बताई हैं 'उत्तरी', 'दक्षिणी', 'पश्चिमी' तथा 'नगपुरिया'। इन में उत्तरी के भी दो रूप हैं 'सरवरिया' और 'गोरखपुरी'। इसी गोरखपुरी में शिकायत के लिए 'ओरहन' शब्द है तथा दूसरे कोने में मुजफ्फरपुर से बंगाल तक शिकायत के लिए 'उलहन' शब्द है। ऐसे में, यदि वास्तव में यह कविता किसी हीरा डोम ने लिखी होती तो वह इस का शीर्षक 'हमार ओरहन' या 'हमनी के उलहन' देता।

इस कविता में प्रयुक्त भाषा की सहायक क्रियाओं को ले कर जिन विद्वानों ने उन का जन्म स्थान निर्धारित करने की चेष्टाएँ की हैं, वे प्रयास तो सराहनीय हैं लेकिन उन्हें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि वे पूरे 100 वर्ष बाद इस कविता का विश्लेषण कर रहे हैं। साथ ही लोगों के प्रव्रजन द्वारा भी भाषाओं/बोलियों की सहायक क्रियाएँ आपस में घुल-मिल जाती हैं। 100 साल पहले प्रव्रजन आज की अपेक्षा कम होता था लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि होता ही नहीं था। कहते हैं कि गुनहगार कितना भी चतुर क्यों न हो वह अपने जुल्म के साथ ही कोई न कोई सबूत जरूर छोड़ जाता है। इसी कविता की एक पंक्ति के विषय में भी यही क्या जा सकता है। कविता के चौथे छंद में लिखा है "भंटऊ के लेखे न कवित हम जोरब जा" इस का अर्थ है कि भाँट की तरह हम कविता भी नहीं बना सकते। अब प्रश्न उठता है कि जो हीरा डोम ऐसी सधी हुई कविता लिख रहे हों, वह क्या भांट की तरह की सामान्य कविता भी नहीं लिख सकते थे?

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने हीरा डोम को सफाईकर्मी किस अधार पर बना दिया? कविता की एक पंक्ति 'मुंह बान्हि ऐसन नोकरिया करत बानी' है। इसी के अर्थ करते हुए उन्होंने लिखा है 'हम तो एक सफाईकर्मी हैं जो अपना मुंह कपड़े में बांधकर अपनी सेवा देते हैं। सफाईकर्मी अपना मुंह बांधकर सफाई क्रिया करते हैं, ताकि गंदगी की दुगंध और कीड़े से बचा जा सके। तब यह तय है कि हीरा डोम सफाईकर्मी ही थे। "इतनी ही बात से वे सफाईकर्मी कैसे साबित हो गए? इसी कविता में वे अपने को खेत जोतने वाला भी कहते हैं "हमनी के जोति-जोति खेतिया कमाइबि"। और बेगारी करने बाला भी कहते हैं 'त उहओं बेगरिया में पकरल जाइबि।' हीरा डोम को सफाईकर्मी बना कर उन्हें दानापुर की सैनिक छावनी में इसलिए बिठा दिया गया क्योकि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिह द्वारा घोषित हीरा डोम की जन्मभूमि इलाहाबाद थी। उन्हें सफाईकर्मी की नौकरी करते हुए दिखाना था तो इसीलिए नजदीक की एक सैनिक छावनी खीज ली गई।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह के अनुसार हीरा डोम दानापुर की सैनिक छावनी में एक सफाईकर्मी थे। परंतु मूलतः वे दानापुर के रहने वाले नहीं थे। कारण कि पटना से सटे दानापुर इलाके की भाषा मगही है, जबकि हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' विशुद्ध रूप से भोजपुरी में लिखी गई है। यह कविता सब से पहले 'सरस्वती पत्रिका' में 1914 ई. में छपी थी। वर्ष 1914 में भारत अंग्रेजों का गुलाम था। उस वक्त दानापुर की सैनिक छावनी आम लोगों के लिए प्रतिबंधित थी। आज की तरह भारी पैमाने पर भोजपुरी भाषी लोगों का आना-जाना वहा नहीं था। इसलिए यह तय है कि हीरा डोम मूल रूप से दानापुर के निवासी नहीं थे। उन की कविता विशुद्ध रुप से भोजपुरी में है। इसलिए यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि वे भोजपुरी इलाके के किसी स्थान से जाकर दानापुर की झोपड़पट्टी में बस गए थे।

इस बात के कहीं कोई पुख्ता प्रमाण नहीं हैं कि वे दानापुर की सैनिक छावनी में थे। स्वयं राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने भी इस के कोई प्रमाण नहीं दिए हैं। यह कोरी कल्पना मात्र है। आजतक हीरा डोम के वंशज सामने नहीं आए हैं। डॉ. शुकदेव सिंह के अनुसार हीरा डोम मूलतः बेतिया-चंपारण इलाके के थे। इसी तरह एक विद्वान ने लिखा "कई लोग हीरा डोम को बनारस से दानापुर आया मानते हैं।" डॉ. शुकदेव सिंह तो यह भी लिखते हैं हीरा डोम दुसाध थे, क्योकि चंपारन में 'डोंमड़ा' दुसाधों को कहा जाता हैं, जो डांगर ढ़ोने का काम करते हैं। इसलिए हीरा डोम की जाति

डोम नहीं, बल्कि डोमड़ा थी। अतः वे मूलतः दुसाथ थे'। हालांकि, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह ने इस मत का जोरदार खंडन करते हुए लिखा है कि डॉ. शुकदेव सिंह के तर्क में कोई खास दम नहीं है। भोजपुरी भाषा के सामान्य जानकार भी जानते हैं कि डोंमड़ा शब्द का प्रयोग भोजपुरी क्षेत्र में नीच स्वभाव बाले व्यक्ति के संदर्भ में किया जाता है। दुसाध को 'डोमड़ा' कहने की परिपाटी पूरे बिहार मे नहीं है।

हल्ला-गुल्ला अथवा गाली-गलौज के अर्थ में 'डोम-धाऊंच' अथवा 'डोम डिगारी' अवश्य चलता है। वास्तव में उन की जाति और जन्म स्थान के बारे में इतनी अटकलें इसीलिए लग रही हैं क्योंकि हीरा डोम नाम का कोई दलित कवि वास्तव में हुआ ही नहीं था।

इस विषय पर मेरी डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह से फोन पर लंबी वार्ताएँ हुई हैं। वे भोजपुरी की पाठ्यक्रम निर्माण कमेटी में थे। उन के ऊपर हीरा डोम की जीवनी लिखने का दवाब था। ऐसे में उन्होंने कविता के आधार पर उन की जीवनी गढ़ी है। यह जीवनी आज 'जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा' तथा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के भोजपुरी विभागों में पढ़ाई जा रही है। हालांकि, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह का प्रयास सराहनीय है, लेकिन वे घोर द्विज मानसिकता के महावीर प्रसाद द्विवेदी के षडयंत्र से परिचित नहीं थें। यह कविता स्वयं महावीर प्रसाद द्विवेदी ने ही छद्म नाम से लिखी थी, इस बात का प्रमाण स्वयं कविता से ही मिल जाता है। इसलिए कि कविता शास्त्रीय छंद विधान के अंतर्गत सधी हुई शैली-शिल्प में लिखी गई है।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह के अनुसार हीरा डोम की कविता एक सधे हुए कवि की रचना है। यह कविता वणिक है, इसका छंद मनहरण घनाक्षरी है, जिसमें 16 या 15 वर्ण पर यति होती है और जिसका अंतिम वर्ण गुरु होता है। निश्चित रूप से 'अछूत के शिकायत' अपने संरचना-शिल्प के कारण याद की जाएगी, परंतु इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि यह हीरा डोम की पहली रचना नहीं रही होगी। भाव, संरचना-शिल्प और प्रतिपाद्य की दृष्टि से यह कविता अत्यंत बेजोड़ है। इसीलिए कहा जा सकता है कि यह कविता किसी सधे हुए हाथों की रचना है और हाथ तो तभी सधते हैं, जब कोई रचनाकार इसका पूर्वाभ्यास करता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि सन् 1914 के परिवेश में इतने अधिक सधे हुए हाथ स्वयं महावीर प्रसाद द्विवेदी के अलावा किसके हो सकते थे? कविता में भी इस बात के तत्व मोजूद है कि यह कविता बनारस के महावीर प्रसाद द्विवेदी ने छद्म नाम से लिखी है। इस के प्रमाण में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिह लिखते हैं 'भाषा के संबंध में 'अछूत की शिकायत' कविता एक और भाषा वैज्ञानिक सूत्र की तरफ ध्यान आकृष्ट करती है। वह यह कि हीरा डोम की कविता में सुनाइबि/उठाइबि/जाइबि/कमाइबि जैसे क्रियात्मक प्रयोग मिलते हैं, जो पुराने इलाहाबाद की भोजपुरी की अपनी विशेषता है। यदि यह विशेषता भोजपुरी क्षेत्र के किसी इलाके में है, तो वह निश्चित रुप से बलिया क्षेत्र में है। बलिया बनारस के पास ही स्थित है। इस से यह और भी पुख्ता हो जाता है कि यह कविता द्विवेदी जी ने ही लिखी थी क्योंकि द्विवेदी जी की अपनी मातृभाषा बलिया-बनारस के पास की भोजपुरी ही थी।

कविता में पहले ही छंद में धर्मान्तरण को खारिज किया गया है। धर्मान्तरण को बड़ा ही कलंकित कर के वर्णित किया गया है 'कैसे मुंहवा देखाइबि'। यह घोषणा कोई द्विवेदी, चतुर्वेदी ही कर सकता था। यह छद्म 'आत्म सम्मान' था।

जिन के स्वाभिमान, आजादी, अस्मिता और आबरू को रोज पैरों तले रौंदा जा रहा हो, वे लोग भला धर्मातरण के प्रति ऐसा दृष्टिकोण क्यों रखेंगे? हीरा डोम के नाम से प्रचारित इस कविता में धर्म, समाज का गहन चित्रण है। ऐसे चित्रण करने वाला हीरा डोम यह नहीं जानता होगा कि हमारी पूजा पद्धतियाँ अलग हैं। हमारे धार्मिक और सामाजिक संस्कार अलग हैं। हमारा धर्म परंपरा से चला जा रहा 'आदि धर्म है। फिर धर्मातरण इतना कलंकित क्यों? यदि यह कविता एक डोम दलित द्वारा लिखी गई होती तो वह अपनी सामाजिक दुर्दशा तथा भोगी जा रही परेशानियों का जिक्र पहले करता, धर्मातरण और धर्म का बाद में। लेकिन कविता में यह क्रम उल्टा है। ऐसा कार्य कोई द्विवेदी, चतुर्वेदी ही कर सकता था। जो हीरा अपने दर्द को शब्दों में पिरोने और उसे अपने समय की प्रतिष्ठित पत्रिका 'सरस्वती' तक पहुँचाने की चेतना रखता था। यह अपने डोम समाज के प्राचीन गौरवशाली इतिहास की भी चेतना रखता ही होगा। यदि यह कविता उसी ने लिखी होती तो एक छंद में यह अपने गौरवशाली इतिहास को जरुर उकेरता। इतिहास साक्षी है कि डोम भी कभी भूपति और स्थानीय सता के केन्द्र थे। इस का प्रमाण कुछ अंचलों में 'डोम किला' (पलामू किले के पास), डोमन डीहा, डोमिन गढ़, डोम चांच जैसे नाम हैं।

यदि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह की मान लें कि हीरा डोम इलाहाबाद में हुए थे तो क्या हीरा डोम नहीं जानते थे कि वर्ष 1914 से वहुत पहले से ही

मुंगेर के ढ़ाढ़ी (डोमों की उपजाति), गया के 'मगहिया डोम', पलामू के 'बंस फोड़', आदि नाम से जाने जाने वाले डोम सशक्त विद्रोह कर के अंग्रेजों को कड़ीं ठक्कर दे रहे थे। स्थानीय सामंत, पुरोहित और साहूकार जो उन के दुस्साहस से भयभीत थे। हीरा डोम ने ही यदि वह कविता लिखी होती तो वे उस स्वाभिमान का जिक्र जरूर करते।

वर्ष 1914 के बाद बिहार में दलितों के बहुत से आंदोलन हुए। कहीं भी हीरा डोम का नामोनिशान नहीं मिलता। सन 1927 में ही 'चांद' पत्रिका का 'विशेषांक' छपा था। इस के संपादक नंदकिशोर तिवारी थे। यदि हीरा डोम हुए होते तो वे इस विशेषांक में उन की कोई रचना जरूर छापते या उनका जिक्र जरुर करते। सन् 1933 में ही मन्दिर प्रवेश को लेकर सरकार को दलितों की तरफ से एक प्रस्ताव भेजा गया था। उस पर जिन अलग जातियों के छह दलितों के नाम मिलते हैं, उन में एक नाम 'वंशी डोम' का भी है। 1932–33 में गाँधी जी के नेतृत्व में बिहार में जगह–जगह अस्पृश्यता निवारण आंदोलन को सनातनी हिन्दुओं के विरोध का सामना करना पड़ रहा था। पूरे बिहार में जगह–जगह जो आदोलन चल रहे थे उन में कहीं भी हीरा डोम का नाम नहीं मिलता।

सन् 1937 में मुंगेर सुरक्षित क्षेत्र से निर्वाचित विधायक डा. रघुनंदन प्रसाद ने मासिक पत्रिका 'दलित मित्र' का प्रकाशन क्रिया था। इसमें भी कहीं न तो हीरा डोम का जिक्र है, न ही उन की 'अछूत की शिकायत' कविता है। हालांकि, इस में 'दलित वर्ग की पुकार' (कविता) और 'अछूत की आह' (एकांकी) छपी है।

सवाल है, महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इस कविता के लिए अपना छद्म पात्र डोम जाति से ही क्यों चुना हैं यह जानना मुश्किल नहीं की बनारस में अछूत जातियों में डोम जाति ज्यादा चर्चित और प्रासंगिक थी। बनारस के श्मशानों में ही नहीं बल्कि डोम राजा के महल की महिमा तक डोम जाति की ख्याति रही है। काशी के डोम वैसे भी धनी माने गए हैं। यही नहीं, बनारस से निकल कर पूरे मिथिलांचल के बीचोंबीच होते हुए पूर्वोतर राज्य असम तक जाने वाली एक प्रधान सड़क का नाम ही 'डोमड़ा सड़क' है। यह सड़क आज भी है। किवदंती है कि यह सड़क काशी के डोम लोगों ने बनवाई थी इसलिए कि अछूत होने के नाते उन के पैसे किसी ने नहीं लिए थे।

अब प्रश्न उठता है कि 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक को छद्म नाम रख कर 'अछूत की शिकायत' जैसी कविता लिखने की जरूरत क्यों पडी? इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमें सन 1914 से ठीक पहले की परिस्थितियों को समझना होगा। दिसंबर, 1909 में 'दि इण्डियन रिव्यू' नाम का पत्र बडोदरा के गायकवाड का एक लेख 'दि डिप्रेस्ड क्लासेस ऑफ इण्डिया' प्रकाशित कर चुका था। यह वह समय था जब दलित विमर्श ठोस शक्ल ग्रहण करने लगा था। इस के बाद जब वर्ष 1911 की जनगणना हुई तब दलित जातियों को ले कर वाद–विवाद चल रहा था। वर्ष 1911 की जनगणना में यह स्वीकार किया गया था कि निन्न जातियों के लोग अशुद्ध होते हैं इसलिए उन्हें मंदिरों में प्रवेश नहीं करने दिया जाता। श्राद्ध के समय 'चमार', 'धोबी' तथा 'डोम' जैसी पतित जातियों को गया के विष्णुपद मंदिर और अक्षयवट धाम में प्रवेश नहीं दिया जाता। अब तक बहुत बड़े पैमाने पर दलितों का ईसाईकरण हो चुका था। वर्ष 1911 की जनगणना के दौरान कई मुस्लिम तथा ईसाई संगठन अछूतों को हिन्दू समाज में शामिल किए जाने का विरोध कर रहे थे। उन की इच्छा थी कि अछुतों को अलग गिना जाए। इधर अंग्रेजों द्वारा दलितों के उत्थान के लिए विशेष कार्य भी किए जाने लगे थे। ये सुधार कार्य 1857 के विद्रोह के कुचले जाने के बाद ही शुरु हो गए थे।

1857 के विद्रोह के बाद कैनेथ मेक्वीन ने 'हू इज टू बीम फार इंडियन म्यूटिनी' में मिशनरियों को सुझाव दिया था कि वे उच्च जाति ब्राह्मणों को धमांतरित करने पर गौरवान्वित न हो अपना ध्यान और अपनी शक्ति निम्न वर्गों पर केन्दित करें। उन्होंने छोटा नागपुर के मिशनरियों के प्रयासों की सराहना करते हुए लिखा था 'यद्यपि सरकार को खुल कर भारतीयों के ईसाईकरण के काम में शामिल नहीं होना चाहिए। फिर भी, यह ऐसा काम कर ही सकती है जिस से इस लक्ष्य को प्राप्त करने में प्रोत्साहन मिले है' वर्ष 1912 में बिहार राज्य का गठन हुआ था। इसी वर्ष 'दि इंडियन रिव्यू के संपादक जी. ए. नतेशन ने दलित विमर्श पर 'दि डिप्रेस्ड क्लासेस' शीर्षक से प्रसिद्ध व्यक्तियों के लेखों व भाषणों के अंश प्रकाशित किए थे।

इस दौरान दलित संगठित भी होने लगे थे। उनमें नवचेतना का संचार होने लगा था। इन में ईसाई मिशनरियों का बहुत योगदान था। ऐसे में महावीर प्रसाद द्विवेदी जी को लगने लगा था कि डोम या अन्य दलित कहीं धर्म परिवर्तन कर ईसाई न बन जाएँ इसीलिए उन्होंने यह कविता लिखी। इसका स्पष्ट प्रमाण तो यह है कि कविता का पहला चरण ही धर्म परिवर्तन को बड़ा ही कलंकित कार्य घोषित करता है।

इस कविता में लेशमात्र भी दलित विमर्श नहीं है। इस में हीरा डोम को हिन्दूधर्म में अथाह परेशानियों का सामना करते हुए दिखाया गया है।

दुख भोगते हुए उसे धर्म छोड़ने पर उस के मुख से शम्बूक के हत्यारे राम की चीख 'हाय राम धरम न छोड़त बनत बाटे' आदि जैसी बाते तथा 'बेधरम होकर कइसे मुंहबां देखाइबि' की बातें निकल रही हैं। ऐसी कविता यथास्थितिवादी तो हो सकती है लेकिन उसे दलित विमर्श की कविता कैसे कहा जा सकता है? इस कविता में विश्वास व्यक्त किया गया है कि तथाकथित विष्णु ने खंभा फाड़ का प्रह्लाद को बचाया था। विष्णु ने मगरमच्छ के जवड़े से हाथी को बचाया था। द्रोपदी की लाज भी उसी ईश्वर ने बचाई थी। उसी ने अपनी छोटी उँगली पर पर्वत उठाया था। अब कवि उसी तथाकथित ईश्वर को अपने उद्धार के लिए यह कह कर उकसा रहा है 'डोम जानि हमनी के छुए से डेरइलें।'

इस के साथ ही कविता में दलितों द्वारा उच्च जातियों का पेशा अपनाने की भावना के प्रति भी उदासीनता व्यक्त की गई है। कविता में यह हीन भावना व्यक्त हुई है कि हम अक्ल लोग ब्राह्मण, ठाकुर, शाहू, भाट और अहीर किसी का भी काम नहीं कर सकते। इन जातियों के पेशे पर कविता में अपरोक्ष रूप से व्यंग्य भी किया गया है, जबकि स्वयं के गधे की तरह बोझा ढ़ोने के काम का बड़ा ही महिमा मंडन किया गया है। कविता में दलित जीवन की घोर यातना का चित्रण तो मिलता है लेकिन उस से बाहर जाने का मार्ग कहाँ है? सन 1914 के परिवेश में यदि देखें तो सभ्य बनने, संस्कारित होने और उन्नति करने का एक ही मार्ग था यह था हिन्दू धर्म के गंदे चोंगे को उतार फेंक का ईसाई बन जाना। लेकिन इस के विपरीत, कविता में यह कार्य तो कलंकित होना और नाक कटवाना बताया गया है। देखा जाए तो तात्कालिक परिस्थितियों में विद्रोह का यहीं एक मात्र रास्ता था कि शासक के धर्म में रह कर सत्ता पक्ष से लाम उठाया जाए। वह सत्ता पक्ष हीरा डोम के वर्ग को हिन्दुओं की 'पनही से पिटि-पिटि हाथ गोड़ तुडि दैलै' से भी बचाता और 'पाके में से भरि-भरि (वैक्टिरिया युक्त) पिअतानी पानी' से भी बचाता।

महाबीर प्रसाद द्विवेदी जी का इस कविता को लिखने का उददेश्य मात्र दलितों को धर्मातरण से रोकना ही नहीं था, बल्कि इससे भी बड़ा एक उददेश्य और था। इस तीर से उन्होंने एक दूसरा शिकार यह किया कि उन्होंने हीरा लााल उर्फ स्वामी अछूतानन्द 'हरिहर'के साहित्यिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आदोलन को डिफ्यूज कर दिया। वास्तव में यह कविता हीरा लाल की क्रांति के विरूद्ध एक प्रतिक्रांति थी। द्विज मानसिकता से भरे महाबीर प्रसाद द्विवेदी ने इसीलिए अपनी कविता के छद्म कवि का नाम 'हीरा डोम' रखा। यदि ऐसा न होता तो यह हीरा डोम की जगह 'मकडू डोम, 'मकोडू डोम', 'बुद्धू डोम' , 'कलुआ डोम' जैसे घृणित एवं निदंक नाम रखते क्योंकि द्विजों के आदर्श मनु का यही फरमान था। जिस समय यह कविता प्रकाशित हुई थी, ठीक उसी दौरान चमार जाति के प्रसिद्ध कवि हीरा लाल उर्फ स्वामी अछूतानन्द 'हरिहर' आदि हिन्दू नाम से अपना आंदोलन चला रहे थे और लिख रहे थे। उन की पहली पुस्तक 'हरिहर भजन माला' आगरा से 1917 में प्रकाशित हुई थी लेकिन वे इस से बहुत पहले से ही लिख रहे थे। उन का बचपन का नाम भी हीरा लाल था। हीरा लाल पर हाल ही में प्रो. श्योराज सिंह 'बैचैन' ने लिखा है "जिस तरह से तथाकथित हीरा डोम की रचना को 100 साल पूरे हो रहे हैं, ठीक इसी तरह से हीरा लाल (बाद में अछूतानन्द), जिनको कुछ विद्वानों ने आधुनिक दलित साहित्य का प्रारंभिक लेखक माना है कि रचनावली को भी साल हो रहे हैं।"

वास्तव में स्वामी अछूतानंद (प्रारंभिक नाम हीरा लाल) ने वर्ष 1914 से वर्ष 1917 तक के दौरान अपनी रचनाओं के जरिए समाज को उद्वेलित किया था और दलितों के मुद्दे को मुखरता से उठाया था। वे आदि हिन्दू सभाओं में कविताओं का पाठ भी करते थे। उन्होंने इस दौरान यात्राएँ की और अस्पृश्यता और अति पिछड़ी जातियों के नैसर्गिक हकों के लिए उन्हें संगठित तथा सजग किया। वर्ष 1917 में उन्होंने दिल्ली पहुंच कर 'अखिल भारतीय अछूत महासभा' की स्थापना की। पाँच साल में इस सभा का देशव्यापी विस्तार हुआ।

महावीर प्रसाद द्विवेदी अपने समय के प्रसिद्ध हस्ताक्षर थे। वे हीरा लाल के आंदोलन से अपरिचित नहीं रहे होंगे। उन्हें डर था कि हीरा लाल के आंदोलन को अंग्रेज कहीं ईसाई धर्म की तरफ न ले जाए। इसलिए उन्होंने यह कविता लिखी और उस का पहला ही चरण धर्मांतरण के विरोध में लिखा। साथ ही महाबीर प्रसाद द्विवेदी को हीरा लाल से आधुनिक दलित साहित्य का आदि कवि बनने का रुतबा भी छीनना था। महाबीर प्रसाद द्विवेदी दूरदृष्टि से सम्पन्न थे। वे जानते थे की हीरा लाल से प्रभावित हो कर अन्य दलित भी अपना साहित्य रचेंगे और वे अपना दलित साहित्य विमर्श स्थापित करेंगे। जब ऐसा होगा तो इस कविता को छापने के वाद वे दलित विमर्श के संस्थापक भी कहलवाएंगे। सन् 1924 में यदि रंगभूमि उपन्यास लिखते समय कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद हीरा लाल (अछूतानंद जी) के भय से भयभीत हो सकते थे तो वर्ष 1914 में महाबीर प्रसाद द्विवेदी क्यों नहीं?

■■■

दलित साहित्य परंपरा और हीरा डोम

संजय ऋतुराज

दलित साहित्य परंपरा कब से शुरू भइल? कब ऐतना वृहद रूप ले लिहलस? कांहे लिहलस? ई सब अपने आप में सोध के विषय बा। साहित्य लेखन के क्षेत्र में आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल अउर आधुनिककाल के तमाम विषयन पर खूब लोग पेरल-पारल अउर ओकर फलो मिलल, हिन्दी साहित्य काल के रूप में इतिहास में दर्ज हो गइल। अब सावाल बा की दलित साहित्य के परंपरा कांहे शुरू भईल? अउर शुरू हो भी गइल त एकर समय काल कब से मानल जाई? अगर आधुनिक काल से मानल जाई त सवाल ई पैदा होई की आदिकाल से लेके रीतिकाल तक दलित पर कवनो तरह के अत्याचार ना होत रहल ह? अगर होत रहल ह त पहिले कांहे ना दलित साहित्य के मुख्य विषय बानावल गइल? कबीर दास और रविदास जी के कवना श्रेणी में राखल जाई? इ सब देखला सुनला के बाद लागता की शुरू से चलल आ रहल गैरदलित लेखक बुद्धिजीवी दलित के उपर लिखल अउर मंथन कईल व्यर्थ मानत रहले लो, कांहे की इ उजागर हो जाई की गैर दलित ही समस्या के मूल जड़ बा, यानी अपने पैर में कुल्हाड़ी मारला के सामान बा, इ सच्चाई के जाने के होखे त विश्वमंच के मानल जानल दलित लेखक डॉ. शत्रुघ्न कुमार के 'स्वीकारोक्ति' नाम के लघु कहानी पढ़ी जवन 'सम्यक भारत' नाम के पत्रिका में जून अंक 2014 में प्रकाशित भईल बा। कहानी के मूल परिधि बा दलित साहित्य सम्मेलन जवना में दलित लोग गिनल चुनल और गैर दलित जेकरा मन में दलित के पीड़ा, कहानी के सामान बा के संख्या ढेर बा, कहानी में तीन दिन तक दलित साहित्य पर खूब हो-हल्ला मचल बा दलित साहित्य के नायक बने खातिर सभे आपन-आपन जोर आजमा रहल बा, अउर विवाद एह बात पर हो जाता कि दलित साहित्य गैर दलित लोग कांहे नईखे लिख सकत? कहानी के निर्णायक क्षण में एगो दलित विचारक आपन बाती रखते हुए कहतारे 'दलित साहित्य पर एकाधिकार केहू के ना होखे के चाही दलित और गैर दलित सभे लिखो, बाकी साथ में इहो लिखे की दलित के दलित बानावे वाला, दलित के मानव समाज के मुख्यधारा से दुर रखे वाला, दलित के पीड़ा देबे वाला, दलित पर अत्याचार करे वाला, के बा? एह बाती से सम्मेलन में कुछ लोग ताली बाजावता त कुछ लोगन के सांप सूंघी लेता, कहानी में एगो और कहानी के जिक्र बा जवना में एगो गैर दलित 'पश्चाताप' नाम से कहानी लिखतारे और उ कहानी लिखला के बाद अपना के पंफासी पर लटका लेत बाड़न उ स्वीकार करत बाड़न की हम 65 साल के उम्र तक केतना दलित के महा दलित बनवनी, केतना के जीवन में जहर घोरनी, केतना ज्ञानी दलित के अज्ञानी के डिग्री दिहनी....। दलित के पीड़ा अनगिनत बा, पीड़ा देबे वाला अनगिनत बा।

हीरा डोम इ सोची के कभी ना लिखले होइहें की दलित साहित्य परंपरा के शुरुआत करतानी, अउर दलित साहित्य लेखन के श्रेणी में पहिला दलित लेखक में हामार नाम आई। 1885-1886 वेफ आसपास जनमल हीरा डोम वेफ कविता 'अछूत के शिकायत' 1914 ई. में सरस्वती पत्रिका में छपल, जवना समय में भारत देश अंग्रेजन के गुलामी के सिकड़ में जकड़ल रहे। एकर सबूत जुटावल बाड़ा मुश्किल बा की हीरा डोम 'अछूत के शिकायत' कब लिखले होईहन, कवनो अंग्रेजी अधिकारी के नाम ऐह कविता में रहीत त ओसे दिन, महिना, साल के आन्दाजा लागावल जा सकत रहल ह। ऐतना त ताल ठोक के जरुर कहल जा सकेला की हीरा डोम के अउरिओ अईसन कविता होई जवना के साक्ष्य हीरा डोम के साथे सामाप्त हो गइल होई। ऐह बात में दोराय नईखे की भिखारी ठाकुर आ हीरा डोम जईसन महान रचनाकार के आपन रचना समाज के सामने लियावे खातिर उकित खोजे के पड़ल होई जवना में भिखारी ठाकुर के सर्वोपरि कहल जा सकेला कांहे कि भिखारी ठाकुर जवना तरीका के अखतियार कईलन उ हवे लोकरंग शैली जवन परंपरा बनी गइल अउर आज भी चलल हा रहल बा। भिखारी ठाकुर के रचना में मनोरंजन के संगे-संगे समाज के बेवस्था पर चोट बा,

अउर उ चोट खायेवाला गरीब दबल कुचलल लोग बा जवना कतार से हीरा डोम के अलग नईखे कईल जा सकत। हीरा डोम के रचना दलित समुदाय के असहाय पीड़ा के रूप में बा, जवन सहायता करेवाला के राह ताकता।

हीरा डोम के दुख फरखा फरनियन से चलल आ रहल आथाह मार्मिक दुख के अभिव्यक्ति बा। भिखारी ठाकुर 'बेटी बेचवा' लिखले होईहन त कहीं ना कहीं हीरा डोम जईसन लोगन के हालात पर लिखले होईहन जवन बेटी जनमावे के जनमा दिहलस बाकी सामाज के कलंक रूपी दहेज प्रथा से लड़े के क्षमता ना रहला के कारण और गरीबी से त्रस्त होके अमानवीय निर्णय के कारण आपन बेटी बेचे के नौबत आईल होई।

हीरा डोम के सामन्तवादी मुखियन पर भरोसा ना रहे काहे की दुख के असली जड़ त इहे लोग बा, ऐही से इंहा के अंग्रेज अधिकारी से गोहार लागावतानीः

हमनी के राति दिन दुखवा भोगत बानी
हमनी के सहेबे से मिनती सुनाइबि
मुँह बान्हि ऐसन नोकरिया करत बानी
ई कुलि खबरि सरकार के सुनाइबि

हीरा डोम के फरा विश्वास रहल कि अंग्रेज भारत देश से जइसे सतीप्रथा, बाल विवाह जईसन कुप्रथा के अंत कईलनस ओईसही हमनियो के जिनगी से अत्याचार जईसन दुख के अंत हो जाई।

हमनी के दुख भगवनो न देखता जे
हमनी के कब ले कलेसवा उठाइबि
कांहवा सुतल बाटे सुनत न बाटे अब
डोम जानि हमनी के छुए से डेराइले

हीरा डोम के रचना से लागेला की हिन्दू देवी देवता में उनकर पुरखा–फरनिया के पूरा आस्था रहल ऐही से भागवान के चमत्कारी करतब के बखान कई दुख से उबारे के गोहार लागावतारे बाकीर आस फरा ना भईला पर भागवान के भी छुआछूत के भंवर में फंसल मानी लेत बाड़न अउर धर्म परिवर्तन के बाती कहतारे, ऐह बाती के असत्य साबित नईखे कइल जा सकत की भारत के अधिकांस दबल कुचलल लोग भगवान आ मंदिर के प्रति आपन आस्था अउर सामंजस्य के तार बईठावे में पीढ़ी दर पीढ़ी केतना कीमती समय बरबाद कईलन एकर आंदाज दलित के पिछड़ापन से लागावल जा सकेला जवना के अउरियो बहुतेरे कारण बा। मानसिक प्रताड़ना अईसन हथियार ह जवना के वार से आदमी के विकास रूकी जाला, दलित के उपर भी अईसने मानसिक प्रताड़ना के हथियार से मारल गइल। मूल रूप में कहीं त भारत देश के अंग्रेजन से आजादी मिल गइल बाकीर दलित के आपन आजादी के संघर्ष आजुओ जारी बा, दबल कुचलल लोगन के नाम के पीछे लागल उप नाम कहीं ना कहीं आज भी सामंतियन के निशाना पर बा, दलित समानता के जिनगी जिये खातिर आज भी संघर्ष करता, उ चाहे गांव होखे चाहे शहर।

हीरा डोम के कविता उजागर करता की दलित समुदाय कर्मठता, ज्ञान, आस्था, मानवता जईसन विश्वास रूपी ताकत से मजबूत रहल, बस जरूरत रहल आजमावे खातिर समदर्शी आजाद भारत के जहां वर्ण भेद, जाती भेद, मानव भेद ना होखे जहां सही मायने में मानव जाति के विकास पर कवनो तरह के अंकुश ना होखे, जहां आदमी मशीन मात्र से परे जीवंत अउर स्वतंत्र प्राणी महसूस करे। हीरा डोम के शिकायत अंग्रेज ना सुनले होईहस त हीरा डोम का कईले होईहन? ई एगो शोध के विषय बा, का उ आपन हार मान लेले होईहन या विद्रोह पर उतरी आइल होइहन या उनका के मारी दिहल गइल होई, कांहे की अछुत के शिकायत गोहार आ बिनती के रूप में अंतिम कविता मानल जा सकेला जवना में संघर्ष, इमानदारी, आस्था, मेहनत, दुर्दशा, दर्द, एकता, गरीबी आदि के शिकायत स्वरूप विनती अंग्रेज अधिकारी के समक्ष बा। ऐतना त जरूर कहल जा सकेला कि समग्र दलित पीड़ा के सशक्त कविता 'अछूत के शिकायत' लिखे वाला कलम के सिपाही महानायक हीरा डोम हार ना मनले होईहन, एकरा आगे रास्ता संभवतः अख़तियार कईले होइहन जवना के अंदाजा हीरा डोम के दलित पीड़ा से लागावल जा सकेला, हीरा डोम के पीड़ा हर एक दलित वर्ग के पीड़ा बा अउर ई रचना कालजई रचना बा जवन भूत में भी प्रासंगिक रहल, वर्तमान में भी प्रासंगिक बा अउर भविष्य में भी प्रासंगिक रही, तब तक रही जबतक की जाति–वर्ण बेवस्था रही, उंच–नीच रही, अमीरी–गरीबी रही, भेद भाव रही, सामंतवादी मानसिकता रही।

ऐतना त सच बा की हीरा डोम दलित साहित्य के लेखन में पहिला अईसन दलित रचनाकार बाड़न जवन दलित के दर्द, दलित के मन के पीड़ा, दलित सामाज के मानसिकता के पूरजोर सामाज के सामने रखले बाड़न अउर इ पीड़ा तब तक जीवन्त रही जब तक की आजाद भारत देश में दबल कुचलल लोगन पर परोक्ष अउर अपरोक्ष रूप में अत्याचार, भेदभाव होत रही। दलित साहित्य परंपरा पर जेतना मंथन होई ओतने हीरा डोम के कविता 'अछुत के शिकायत' प्रखर होई।

मधुकर सिंह एक अपराजेय योद्धा

मधुकर जी नहीं रहे। हिंदी के ख्यात कथाकार मधुकर सिंह 100 से ऊपर कहानियों और दर्जन भर उपन्यास के लेखक। इसके अलावा अन्य विधाओं में भी अनवरत लिखा। तब तक लिखते रहे, जब तक थक कर बीमार नहीं हो गये। कुछ वर्ष पूर्व पक्षाघात के शिकार हुए थे और तब से सक्रियता जाती रही थी। बीमार मधुकर जी को देखना मेरे लिए बहुत पीड़ादायक था।

प्रेम कुमार मणि

1974 में हम लोग पहली दफा मिले थे। तब मैं युवा था और वह सुप्रसिद्ध लेखक। उन्होंने अपने संघर्ष से साहित्य जगत में एक खास जगह बना ली थी। मुख्यधारा की पत्रिकाओं में वे लगातार प्रकाशित होते रहते थे। वह जब पटना में होते तब मेरे ठिकाने पर ही ठहरते। मैं जब आरा में रहा तब उनका घर ही मेरा ठिकाना रहा। 1976 की सर्दियों में हम लोगों ने राजगीर में समांतर लेखक सम्मेलन करवाया, जिसमें कमलेश्वर सहित 60 से अधिक हिंदी लेख इक्टठा हुए। बाबूराव बागूल, दया पवार, अर्जुन डांगले जैसे दलित लेखक भी इसमें शामिल हुए थे। हम लोगों की निकटता और बढी। फिर कई-कई सांस्कृतिक-साहित्यिक आयोजन हम लोगों ने करवाये। साथ-साथ दूर-दूर की साहित्यिक यात्राएं कीं। लड़े-झगड़े भी। लेकिन एक अपनापा हमेशा बना रहा। आज उन्हें याद करते हुए आंखें गलबला जा रही हैं।

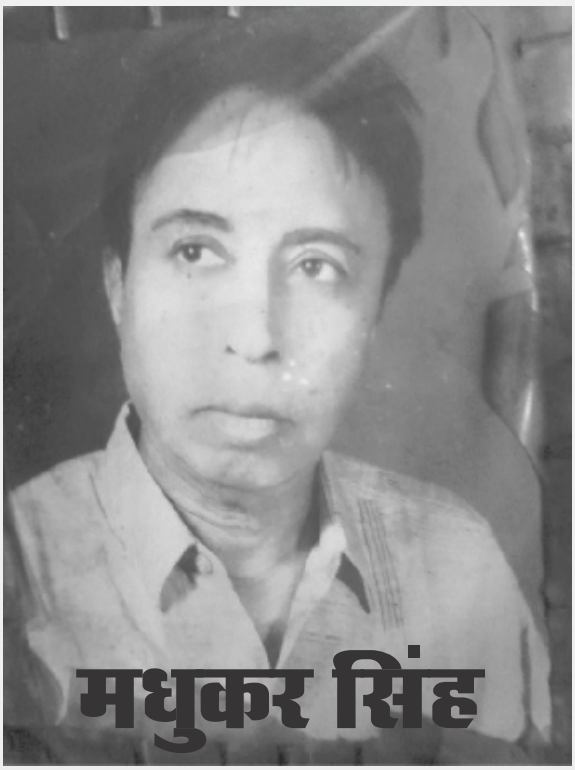

1960 के दशक में हिंदी कथा साहित्य में उभरे मधुकर सिंह ने गांवों और वहां रहने वाले दलित-पिछडों के संघर्ष और जीजीविषा को अपनी रचनाओं द्वारा मुखर किया। नगरों-महानगरों में बैठे लोगों को गांव की अमराइयां, उसके ताल-तलैये और उसमें पसरे पुरइन के पात तो आकर्षित करते थे, लेकिन भुमिहान किसानों और दलित-पिछडी जातियों के जीवन संघर्ष को वह नजरअंदाज करते थे। मधुकर सिंह ने इसी संघर्ष को अपने साहित्य का केंद्रीय विषय बनाया। वह कलावादी मुहावरों में नहीं उलझे और न ही किसी साहित्यक पंथ में अपने को समर्पित होने दिया। वह साहित्यिक कुजात बनकर लिखते रहे। उन्हें नक्सलवादी लेखक भी कहा गया और दलित-पिछडावादी लेखक भी। मार्क्सवादियों ने उन्हें अपनी पटरी से उतरा हुआ माना। लेकिन वह स्वयं को असली मार्क्सवादी ही मानते रहे। सोवियत लैंड पुरस्कार सहित अनेक पुरस्कार उन्हें मिले, लेकिन जनता की ओर से उन्हें जो स्नेह मिला, वह कम लेखकों को ही मिलता है।

बाजारवादी जमाने में जनसंघर्षों को मुखर करना जोखिम भरा काम है। यह जोखिम उन्होंने स्वीकारा था। इसलिए सरकारों और अकादमियों ने उन्हें कभी नहीं अपनाया। मधुकर जी ने कभी इसकी परवाह भी नहीं की। उनकी जरूरतें कम थीं, इच्छाएं सीमित थीं। जीवन के आखिरी संघर्ष को उन्होंने अपने गांव के पुश्तैनी घर के एक कोने में जीया। वह कभी झुके नहीं। इस अपराजेय योद्धा को विनम्र श्रद्धांजलि।

वास्तव में मधुकर सिंह की साहित्यिक लड़ाई राजसत्ता के लिए कुरुक्षेत्र या पानीपत में नहीं बल्कि आम जनता के खेत-खलिहानों में, झोपड़पट्टी दलित बस्तियों की गली-गलियारों में और आदिवासी समाज के पहाड़ों-जंगलों में लड़ी जाती है।

■■■

सशक्त विचार के बुनियादी महल हीरा डोम के कविता

दिनेश प्रसाद

वइसे त दलित साहित्य के अभ्यूदय 1960 ई के बाद मराठी भाषा में पहिले पहिल भईल लेकिन बाड़ में एकर झलक हिंदी, कन्नड़, तेलगु अउरी तमिल भाषा में देखल गईल। आजू दलित साहित्य के ऊपर एक करोड़, दस लाख से जाड़े किताब छाप गइल बा । ई कुल्ही किताबन के कहानी, कविता, लघु कथा, जीवनी तरह तरह के लेखनी के माध्यम से दलित वर्ग के ऊपर अत्याचार, अनाचार के जीवंत अभिव्यक्ति कईल गइल हउए ।

बाकिर प्राचीन जर्जर खँडहर के गर्भ से ही आधुनिक दलित साहित्य के लता हरिअरी पउलस। उत्तर वैदिक काल से ही ई परित्यक्त दलित लोगन पर आमानुषिक अत्याचार, भीषण शोषक होखत आइल। हजारों साल के पीड़ा के अभिव्यति दलित साहित्य के मध्यमा से प्रकाशवान कइल गईल ।

प्रातः वन्दनीय। परम पूजनीय दैनिक अभिनंदनीय एवं चिर स्मरणीय हीरा डोम के सशक्त विचार धरा कविता के माध्यम से उन्नीस सौ चौदह में ही अविरल, अजस्त्र धरा के सामान प्रस्फुटित भइल । सरस्वती पत्रिका के माध्यम से हीरा डोम के विचार अबाध गति से, तीव्रतम उर्ध्वगामी लौ से प्रकाशित होखे के सान्निध्य पइलस। सचमुच हीरा डोम बिलकुल अँधियारा में ही एक दीपक जलउलन । शून्य, विराट, विस्तृत गगन में एक टिमटिमाट तारा के सामान आपन अस्तित्व के पहचान दिहलस।

आज त साहित्य के माध्यम से आपन दिल क उद्‌गार प्रकट करे के हजारों साधन उपलब्ध हउवे। मगर कल के दिन ई दिन–हिन, लांछित त्याज्य, विवश, भारतीय दलित वर्ग के लहूलुहान भावना, मर्माहत इच्छा के उद्‌गार के सुने वाला के रहे ?

हीरा डोम सचमुच हीरा रहीं । बड़ी बेशकीमती विचार उनकर तगड़ा लेखनी के माध्यम से प्रकाश में आईल जेमे उनकर आ पूरा दलित समाज के पीड़ा, टीस, अंतर्वेदना, आहत सद्‌भावना के मापे वाला कोई नव–आविष्कृत यंत्र ह नइखे बाकिर अंतर आत्मा के टीस अंतर्मन से ही अनुभव कइल जा सकेला।

अंग्रेजी में डोम के मतलब का होखेला – गुम्बद। हीरा सही मायने में प्रकाश–पुंज–गुम्बद रहेले जे खुद उठि उठि के ई हिदायत देत रहलें कि ई अँधा समाज द्वारा जेकरा के छोट जात बतावल जात बा उ अंग्रेजन क बाड़ में बाकिर इहवां के ऊँच जात क बर्बर, नीरकुंश, निर्दयी, अत्याचार सही सही के भी भारतीय परम्परा के धारा से अपने आप के अविच्छिन्न रखि के अपने आप के जुदा राखल बेवफाई समुझिलस।

'अछूत के शिकायत' कविता के माध्यम से अछूत के ऊपर नृशंसताम अत्याचार, पाश्विक व्यवहार, पैशाचिक संचार के दिग्दर्शन (सजीव दास्तान), आत्मदर्शन, अमन चिंतन करे के मजबूर करके, अंग्रेजन अउरी मुगलन के सामने घुटना टेक के, तलवा सहलावे वाला ई हास्यास्पद बड़ जात के लोग जब जइसन, तब तइसन के लिक पर चले वाला, दोगली नीति के चलते भारत के उज्जवल परम्परा पर कलंक लगउते अइलन मगर अफसोस आउर आश्चर्य ई ह की हर शासन बदलत शासन परम्परा में उनसुहातो करी करी के, चापलूसी करी करी के आपन जगह भी बनवले। दंडवत करी करी के आपन जगह भी बनवले रहलन। भारत के आजादी के समय भी हामी के 80ः के वावजूद बहुत हद तक व्यक्त रह गइनी। समस्त संसार जेकर ज्ञान के सामने घुटना टेकलस, जेकरा तेज के आगू केहू के खड़ा होखे के हिम्मत ना रहे उ बाबा साहेब भीम राव आंबेडकर (आजाद भारत के कानून मंत्री) के सिर्फ छोटी जाति के होखे के चलते अलग सीट दिहल गईल। हीरा डोम कहत बानी –

हाय राम ! धरम न छोड़ते बनत बाटे।
बेधरम होके कइसे मुंहवा देखाइबि।।

जे एह देश में गोरा सन से मिल के शोषण कइल उ उंच भइल आ जे अपमान पर अपमान के जहर पी के जे आपण स्वाभिमान पर आंच ना आवे दिहलस उ नीच हो गईल । हाय रे ! दुर्भाग्य!

दलित भोजपुरी काव्य के सौ साल पर विचार गोष्ठी

रविवार, 18 मई 2014 भोजपुरी के दलित कवि हीरा डोम के लिखल कविता अछूत के शिकायत जवना के प्रकाशन सितंबर 1914 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा संपादित सरस्वती पत्रिका में भइल रहे आज ओकरा प्रकाशन के सौ साल पूरा हो

चुकल बा। एही अवसर पर दलित भोजपुरी काव्य के सौ साल विषय पर विचार गोष्ठी के आयोजन अखिल भारतीय लेखक संघ के तत्वाधान में नई दिल्ली में भइल जेकर अध्यक्षता सुप्रसिद्ध लेखक–कवि आ भोजपुरी अध्ययन केन्द्र, इग्नू के निदेशक प्रो. शत्रुघ्न कुमार जी कइनी। संगोष्ठी के शुरू करे से पहिले संजय ऋतुराज के स्व. माई के ईयाद में दो मिनट के मौन रखल गइल।

संगोष्ठी के संचालन श्री संतोष पटेल जी कइनी। उहाँ के ई कहनी कि सरस्वती जइसन हिंदी के जानल–मानल पत्रिका में हीरा डोम के कविता अछूत के शिकायत के प्रकाशन भोजपुरी भाषा के ताकत के परिचायक बा। एह कविता में सामाजिक व्यवस्था के सजीव परंपरा के छाप बाटे आ एही गुण के चलते महावीर प्रसाद द्विवेदी जी एकर प्रकाशन सरस्वती में 1914 में कइनी। ई कविता दलित साहित्य के प्रमाणिक दस्तावेज बा।

योगेश सिंह एह बात पर आपन विचार व्यक्त कइनी कि स्त्री–विमर्श आ दलित विमर्श के चर्चा आज भारत के प्रत्येक भाषा में हो रहल बा। जे लोग ई कहेला कि दलित विमर्श के सूत्रपात मराठी भाषा से भइल उ सरासर गलत बा काहे से कि हीरा डोम के ई रचना के प्रकाशन एह बात के परिचायक बा।

संजय ऋतुराज कहनी कि तत्कालीन व्यवस्था के प्रति लिखल हीरा डोम के क्रांतिकारी कार्य कहल जा सकेला।

नवलकिशोर सिंह निशांत आपन बात राखत ई कहनी हीरा डोम के अंदर एगो अजबे जज्बा रहे। उ बहुते निडर रहलें ,उनकर कविता एकर पर्याय बा।

राजेश कुमार माँझी आपन बात राखत ई कहलें कि आज जरूरत ए बात के बावे कि हमनी के हीरा डोम के कविता अछूत के शिकायत के प्रासंगिकता के ठीक से समझी सन। आज एहु बात के मूल्यांकन होखे के चाहीं कि उ का कारण रहे जवना के चलते हीरा डोम अइसन प्रभावशाली कविता के रचना कइलन।

धनंजय सिंह आपन विचार रखत ए बात पर प्रकाश डलनी कि विशुद्ध क्षत्रिय वर्ग से डोम जाति के संबंध होखेला।

अपना अध्यक्षीय भाषण में प्रो. शत्रुघन कुमार जी एह बात पर बल देनी कि आज समय के ई पुकार बा कि सब दलित लोग एकजुट होके रहे। आज भी भारतीय समाज के एगो बहुत बड़हन तबका के पास मूलभूत सुविधा के अभाव बा। उहाँ के इहो कहनी कि समाज के ई स्वीकार करे के पड़ी कि प्रेमचंद के पात्र आज लिखे लागल बा लोग। ओ लोग के लेखनी में क्रांति के स्वर सुनाई देत बा। प्रो. शत्रुघन कुमार जी सब प्रतिभागी लोग, श्रोता लोग आ मीडिया के प्रति आभार प्रकट करत अपना बात के समाप्त कइनी।

एह संगोष्ठी में ई बात ध्वनि मत से प्रस्तावित भइल कि नया सरकार भोजपुरी के शीघ्र ही संविधान के अष्टम अनुसूची में शामिल करे।